

गास्त्रजीको गुद पने और गुद स्थान पर रखा । -

ॐ नमः



आत्म-मन्थन

ॐ नमः

- संपादक और विवरक *

मुनि श्री चम्पक सागरजी महाराज साहब (संन्यास)



- प्रकाशक -

श्री जन सवाधार साहित्य समिति
(खामग्रोड) जुनागढ (गुजरात)

ॐ नमः

प्रथमावृत्ति ।

द्वितीय मुद्रण ४९०

मूल्य १००० रु

द्वितीय मुद्रण २०२०

ॐ

मूल्य रुपये २-५० पत्ता

ॐ नमः ॐ नमः ॐ नमः ॐ नमः ॐ नमः ॐ नमः ॐ नमः ॐ नमः ॐ नमः ॐ नमः

- प्राप्ति स्थान -

श्री जन सवाधार साहित्य समिति

दोगी ब्रधर्स

मनमुल्लाल माणेखव दोगी (रामप्राग्वाला)

शाठेरावा (चारा बाजार)

कुना न ह (गुजरात)

卐 सद्भावना 卐

जस रहि बलोक, पाषत नवनीत सत्य ।

जस आत्म विधारसे, पाषत सत्यानन्द सत्य ॥ १ ॥

आत्म-मग्यन गुजरातीमें

पृष्ठ २८ मू ६० पसा

आत्म-मग्यन हिन्दीमें

पृष्ठ १४० मू ह २-५० पसा

॥ ॐ ॥

श्रीमान् गणिवय मानसागरजी महाराज साहेब गुरुभ्यो नम



महाराज साहेब सदा जयतु

महाराज साहेब सदा जयतु

म

मान् गणिवय मानसागरजी

प

श्रीमान् गणिवय मानसागरजी

स

मान् गणिवय मानसागरजी

ण

महाराज साहेब सदा जयतु

महाराज साहेब सदा जयतु

गद्यमे स्वस्तिक प्रबन्ध

चरणकिङ्कुर — चम्पकसागर

ॐ सर्वं भव
- दो अङ्क -



वाचक महाशयसे विनम्र निवेदन करता हूँ कि मैं मृत्यु
 हूँ न करता हूँ न कवि हूँ न विद्वान हूँ किन्तु यह ममके पुतारी तो
 जबर हूँ तो भी कुछ कर्मके शोषणमसे धारम-संबंधी मुझे विचार
 आया करत और गार्श्रीका अध्ययन धारम-निष्पन्न लिये करता रहा
 हूँ। मुझे शास्त्र पढ़त विचार आया कि कुछ स्व-परक अन्यायके लिये
 लिखू और कुछ साहित्य उद्धव तो इस पुस्तकामें समभाव-समाधि रूप
 कुछ लाभ प्राप्त होगा। और धारम संयन स्वादा होगा। दूसरे लोग
 भी पढ़ेंगे तो उनोको गुम भाव और धारम मुद्रिकी भावना रहेगी।
 इस भाग्यसे प्रस्तुत किताबका आलेखन करनेमें कुछ साहित्यका संवा
 दन भी किया है। यह किताब लिखनेमें जो कुछ भाषा-दोष रहा है
 सो मेरा लिखनेका आचरत कम होनेको रहा है। यह वाचक लोग सुधार
 कर लेंगे। जिस जिस महाशयोंने किताबकी मुद्रि करमेसे मुझे सहायता
 दी है उस महानुभावका मैं शुक्री हूँ। इस किताबमें जिस जिस शास्त्रका
 सहारा लिया गया है। सो उनका नाम भी दे दता हूँ। श्री ज्ञानानन्द।
 श्री गार्श्रीमुधारत काव्य। रत्न करडक भावकाधार। सिद्धर प्रकरण।
 शास्त्र संग्रह। ध्यायान सप्रहादि प्रयोगका अध्ययन करते जिन जिन
 विषयमें लिखी जितकी जबर लगी उमका संवादन किया गया है।
 सो भी उपकारी है। श्री योगी प्रहरीने भी इसाइक काममें मुद्रिहिता
 का सा प्रशतनीय है।

।

इस किताबका नाम 'धारम संयन' रखता हूँ सो धारम-

विषयका अनुसंधान ही मुख्य है। इनोते नामही साधरता लगे बिना नहीं रहेगी।

इस कितारबसे जो विद्यानुभव करता है? उसका निष्पन्न वादक महागव पर ही छोड़ता हूँ। और जो कुछ बूटी रही होवे तो वाक्य लोगने काम चाहता हूँ।

दोटी बड़ी भूम दिलके सम्जन लेना सुधार।
बालक बुद्धि घटिका सम्जन करे उपचार ॥१॥

संवत् २०२२ के मागार मंगी १२ रविवार ॥

—मुनि अंपरत गर (रामानंद)



१
२
३

नोट - बि दे दोनों सम्प्रदाय परस्पर एक दूसरेके विधि विधान बिधा बाँटके ज्ञाता बने। इस भागवते विधि विधान संशुद्ध बिधा है। और अपने अपने सम्प्रदायके विधि विधान करते रहते आराधक बने। यही मेरी अभिन्नाया है।

विषयानुक्रम

पृष्ठ	विषयक नाम	पृष्ठ	विषयक नाम
१	प्राथना वचन हे ।	१६	आचरक ए कताय ।
१	आत्म-भावना भयभवभङ्ग ।		पात्रा ऽ पात्राका वि ।
२	श्री नेमितायका स्तवन ।	२०	दानो घोर दानका विवेक ।
२	श्री द्राक्षितायका स्तवन ।	२१	दानक तीन भेद ।
३	श्री गुर्मातनायका स्तवन ।	२२	दाता घोर पात्रका विवेक ।
४	आत्म भावना पर देना भाई ।	२३	सक्ष्मीजीरा प्रभाव ।
५	श्री जनककी सङ्गाय ।	२३	सुपात्र दानका महिमा ।
६	श्री अध्यात्म पर परमगुरु ।	२४	नील धमका महिमा ।
७	श्री दर्शन पाठ घटक ।	२५	तप धमका महिमा ।
८	नव तिलक ।	२६	तपक द्वारा भेदकी समझ ।
८	धर्माजन लक्षण व्याख्याय ।	२७	विद्यार्थीकी प्ररणा ।
९	भजन कटामानसे ।	२७	साता भावना ।
१०	मोक्ष माग ।	२८	मत्रि भावना ।
११	आत्म निरीक्षण ।	२८	प्रमोद भावना ।
१२	गुण तीन प्रकारके हैं ।	२९	बदना भावना ।
१२	बोध तीन प्रकारके हैं ।	३०	माध्यस्थ भावना ।
१३	विद्व गतिका सदेग ।	३०	अनित्य भावना ।
१४	आत्माकी पहचान ।	३१	अगरण भावना ।
१५	पञ्च भावना ।	३२	सन्तार भावना ।
१६	सत्पुरुषका लक्षण ।	३३	एकत्व भावना ।
१७	दाई अ नर धमके ।	३४	अप्यस्य भावना ।
१८	धमके दो प्रकार ।	३४	अगुचि भावना ।
	घ्यसहार धमके धार ।	३५	अगुचि भावना ।

पृष्ठ	विषयके नाम	पृष्ठ	विषयके नाम
३६	आधम भावना ।	५०	दश लक्षण व्रत विधि ।
३७	निजरा भावना ।	५१	जाप मन्त्र ।
३८	धम भावना ।	५१	उद्यापन विधि ।
३९	लोक भावना ।	५२	मुनिराजके दानकी विधि ।
४०	बौधि दूतभ भावना ।	५२	दयाधिदव पूजन विधि ।
४१	बारे भावनाका सारांश ।	५७	गुरु पूजन विधि ।
४१	निध धमकी व्याख्या ।	६०	सरस्वती पूजा ।
४१	लौकिक धमके ऽकार ।	६३	विसर्जन विधि ।
४१	दगन प्रतिमाका स्वरूप तथा पाणि आचरके लक्षण ।	६३	सामायिक विधि ।
४२	नटिक तथा साधक आ क	६७	आलोचना पाठ ।
४३	देा वत प्रतिमा तथा तीन व्रतका स्व ।	६९	मध्य विभक्तिका उपदेश । समयकी गति
४४	४ ५ अणुव्रत १ २ ३ गुणव्रत ।	७६	गुप्त्य गीघ्नम ।
४५	१-२-३ शिक्षाव्रत स्व ।	७६	श्रद्धाके दो रूप ।
४६	घोया गिम्भाव्रत स्व ।	८४	प्रभु महाश्रीर श्रीर पेठा भेद ।
४७	सातरो सामायिक प्रतिमा ।	८२	मेरी कल्पना ।
४७	चौदी पीपध प्रतिमा ।	८६	उपदेशक दोहा ।
४८	पचमी सचित त्याग प्र ।	८७	पेंतीस बोल ।
४८	छट्टी दिया मयुन त्याग प्र ।	८९	मनुष्य भयकी कुलभताके दृष्टात
४८	सातवी ब्रह्मचारी प्र ।	८९	घन्नी ब्रह्मदत्तका दृष्टात । १
४९	आठमी अररभ त्याग प्र ।	९३	पासग दृष्टात । २
४९	नवमा देग परिग्रह त्या प्र ।	९६	धायका , ३
४९	दशमी अनुमती त्याग प्र ।	९६	शूतका " ४
४९	ग्यारमी उद्दीठ त्याग प्र ।	९७	रत्नका , १
५०	एक कुलक श्री कृत्य ।	९७	स्वप्नका ,

१८ विषयके नाम

- ६८ अथर्व इत्यादि ७
१०१ घमका ,,
१०१ युगका ,,
१०१ परमाणुका इत्यादि
१०२ मनुष्यभय विषयमें विधेय
१ ३ ममत्कार मन्त्र सूत्र
१०३ मगत सूत्र
१०३ गुद गुण शब्दा सूत्र
१०३ प्रणिपात सूत्र
१०४ गुरुको गान्ता वक्ष्या सूत्र
१०४ धम्मनुद्धिषो सूत्र
१०४ इरियावटिय सूत्र
१०४ तत्ता उत्तरो सूत्र
१०५ अन्नस्य सूत्र
१०५ लोपरत सूत्र
१०५ करेमि भंत सूत्र
१०६ सामायिक पारनेदा सूत्र
१०६ चाप ध्वज,
१०७ अनिधि सूत्र
१ ७ नमुत्पुण सूत्र
१०७ जायति धेइसाइ सूत्र
१०७ जायत कविसाटू सूत्र
१०८ नमोऽस्त सूत्र
१०८ श्री जिनैत्र स्तवत
१०८ उवसागहुर सूत्र
१ ९ जय वावराथ सूत्र

पाठ विषयके नाम

- १०९ अरिहंत धेइसाणं सूत्र
१०९ स्तुति
११० श्री जिनैत्र इय पूजन विधि
११ श्री जिनैत्र भाव पूजन विधि
१११ श्री मी अग पूजाक दुगा ।
११२ श्री अष्टप्रदारी पूजाके दुगा ।
११३ नरेय पूजा
११३ वन पूजा
११३ गुद वदन विधि
११३ सामायिक विधि
११४ सामायिक पारनेदा विधि
११५ स्व धा पारं प्रणिमा विधि
११५ श्वान प्रतिमा
११५ यत प्रणिमा
११६ सामायिक प्रतिमा
११६ पीपपापदात प्रतिमा
११६ देग इहायय प्रतिमा
११६ ब्रह्मचय प्रतिमा
११६ गधिसा त्याग प्रतिमा
११६ स्वय धारंभ त्याग प्रतिमा
११६ अनुमति त्याग प्रतिमा
११७ प्रनेसर्निधाव स्वापाव
त्याग प्रतिमा ।
११७ धमणभूत प्रतिमा
११७ नेट - तमनुनि
भागे बारा देसापर

स्व परम पूज्य आत्ममोक्षार्क छायायदेव श्री आनन्दसागर
 सूर्यशर्मा महाराज साहेबके गिन्य रत्नहरी जन साहित्य प्रचारक
 स्व शिष्य श्रीमान मानसावरजी महाराज साहेब ।



जन्म - स १९४० का शु १५ जामनगर
 दीक्षा - सं १९६६ अपा शु १२ सूरत गुजरात
 गणपद - स १९९७ भाषा शु १ बडावती उ गुजरात
 स्वर्गवास - स २०१० महा शु ५ भीषाणाम ।

शुद्धि पत्रक

इस शुद्धि पत्रकके अनुसार किताब पुस्तक हर कर वडे ।

पक्षित	पुस्तक	पुस्तक	पक्षित	पुस्तक	पुस्तक
५०	विपरीत	विपरीत	८	शुद्धि	शुद्धि
७	साधना	साधना	८	साधना	साधना
८०	दुर्धारा	दुर्धारा	२२	दुर्धारा	दुर्धारा
१४	विष्णु	विष्णु	२३	विष्णु	विष्णु
१६	प्याठ	प्याठ	२३	प्याठ	प्याठ
१६	कह	कह	२	कह	कह
५	मुजल	मुजल	२२	मुजल	मुजल
११	राधुप	राधुप	४	राधुप	राधुप
१२	गुण	गुण	५	गुण	गुण
१	विष्णुलला	विष्णुलला	१६	विष्णुलला	विष्णुलला
२	पुटे	पुटे	२०	पुटे	पुटे
२	पुटे	पुटे	६	पुटे	पुटे
७	बहोर	बहोर	६	बहोर	बहोर
८	पवप	पवप	७	पवप	पवप

पृष्ठ	पृष्ठ	शुद्ध	पङ्क्ति	शुद्ध	पङ्क्ति	शुद्ध	पङ्क्ति
६	१३	परं	१३	परं	११	जितने	५
६	१४	हो	१४	ही	११	लेखन	१३
६	१४	सजन	१४	सजन	११	लेखन	१४
६	२१	छात्रियों	२१	छात्रियों	११	पुद्गलमें	१५
१०	७	आह	७	आह	११	अपनमें	१७
१०	६	बन	६	कमका	१२	समुद्रमें	४
१०	११	करणे	११	करने	१०	समज	५
१०	१३	सा	१३	तो	१२	काइ	१७
१०	१३	क्षणिक	१३	क्षणिक	१२	दम	२२
१०	१४	क	१४	के	१३	श्रद्धिकी	२
१०	१७	है	१७	है	१३	अवसन्न	१४
१०	२१	कीई	२१	की	१३	आत्मको	१६
१०	२३	मना	२३	माना	१३	किया	१८
११	१	जितना	१	जितने	१३	ह	२३
११	१	उतना	१	उतने	१४	रखी तो	२
११	६	जितना	६	जितने	१४	बिनशर	६
१०	५	जितने	५	जितने	१४	जीवोंके	१६

पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पठ	पंक्ति	शब्द	पठ	शब्द	पठ
१५	१७	रागमें	१७	२०	मनुष्य	१७	है	२०
१५	२२	हलका,	१७	२१	जाता	१७	जाती	२१
१५	१	दुरव	१८	१	शे प्रहारका	१८	शे प्रकारके	१
१५	४	घारक	१८	३	सापु	१८	सापु	३
१५	८	सागमरुप	१८	७	ध्वजहारक	१८	ध्वजहारके	७
१५	११	वकमें	१	८	की	१	कि	८
१५	११	रुप	१८	८	उपयोगी	१८	उपयोगी	८
१५	१२	जोते	१८	८	जोषका	१८	जोषका	८
१५	१३	उनके	१८	१०	घोर	१८	घोर	१०
१५	१६	दोष	१८	१०	घोर	१८	घोर	१०
१५	१८	दुःखपर -	१८	१२	किरभो	१८	किरभो	१२
१५	२१	बिहो	१८	१२	कीति	१८	कीति	१२
१६	२	मनतबार	१८	१२	घोर	१८	घोर	१२
१६	३	बुद्ध	१८	१८	घोर	१८	घोर	१८
१७	६	सामान्यता	१८	१८	घातमाका	१८	घातमाका	१८
१७	८	मो	१८	१८	रटे	१८	पर	१८
१७	१७	पकाना	१८	१६	घ	१८	घोर	१६

पृष्ठ	पंक्ति	संयुद्ध	शुद्ध	वृत्त	पंक्ति	संयुद्ध	शुद्ध
१८	१६	वष	वष	२०	७	सहकार	सहकारी
१८	२४	प्रकारका	प्रकारके	२०	१७	कथन	कथन
१८	२५	व	घोर	२०	२१	जटाय	जटाय
१८	२७	वांछकर	वांछकर	२०	२४	करणे	करने
१६	३	आगय	सात्व	२०	२४	हे	हे
१६	३	व	घोर	२१	१	तोन	तोन
१६	४	वेर	पर	२१	१	भेद	भेद
१६	५	सयम	सयम	२१	७	गिना	गिना
१६	६	४ हे	४ प्रकार हे	२१	२३	कीनि	कीनि
१६	१०	प्रति	प्रति	२१	२४	मे	मे
१६	११	कायते	कायते	२२	१	वालो	वालो
१६	१६	साधनी	साधनी	२२	१	कीनि	कीनि
१६	१५	व	घोर	२२	६	प्रपत्त हो	प्रपत्त हो
१६	१६	व	तथा	२२	११	कवल	कवल
१६	१८	प्रकारका	प्रकारके	२२	११	मासायी	मासायी
१६	१६	व	घोर	२२	२४	इस	इस
२०	१	प्रयव	प्रयन	२३	४	पथा	पथा

पृष्ठ	पंक्ति	संज्ञा	वृत्त	पृष्ठ	पंक्ति	संज्ञा	वृत्त
२३	१२	स्थोर	स्विर	२५	२०	संज्ञा	वृत्त
२३	१२	विषया	विषये	२५	२३	धै	संज्ञा
२३	१४	मेढरति	भेदाति	२५	२३	पीणे	कहते है
२४	३	भत	भू	२५	२३	देखरादि	छोपरादि
२४	४	कोनसा	कोनसा	२६	२	करणे	करने
२४	४	देनेल	देनेमें	२६	४	लेराकमें	पुराकमें
२४	४	करेगा	करेगा	२६	६	घास्तु	घरतु
२४	१	बढती	बढती	२६	६	कूथ	कुथ
२४	२४	गौच	गौच	२६	८	प्रमाण	प्रमाण
२४	१	खलाजति	तिलानलि	२६	१०	गामोंको	गामोंको
२४	८	अस्थ	अस्थ	२६	१	सतमें	सतमें
२४	१२	मनको	मलद्वे	२६	१८	करणा	करना
४		धिलें	धित	२७	७	केवल	केवल
२४	१३	लोकोंके	लोकोंके	२७	८	पुसो	पुसो
२४	१४	मीलजात	मिलजात	२७	८	उत्तम	उत्तम
२४	१७	विचारगे	विचारगे	२७	९	कना	करना
२४	२०	धै	ध	२७	९	इतसोए	इतसोए

पृष्ठ	पङ्क्ति	श्रुत	वृत्त	श्रुत	वृत्त	श्रुत	वृत्त
२७	१०	प्रासस्य	प्रासस्य	प्रासस्य	३	श्रीवा	श्रीवा
२७	१६	है	है	है	३०	पे	पे
२७	२१	रस	रसकर	रसकर	३०	हो	हो
२७	२५	है	है	है	३०	करनी	करनी
२८	१२	जितकर	जितकर	जितकर	३०	भित्तभित्त	भित्तभित्त
२८	१४	मुनिरजोके	मुनिरजोके	मुनिरजोके	३०	रस्यारस्यवे	रस्यारस्यवे
२८	१७	पादित	जागत	जागत	३०	बुदे बुदे	बुदे बुदे
२८	१७	है	है	है	३०	लेग	लेग
२८	२०	किचिद	किचित्त	किचित्त	३०	उनके	उनके
२८	२०	हो	हो	हो	३०	घोर	घोर
२९	५	करके	करके	करके	३०	अनेवाली है	अनेवाली है
२९	७	है	है	है	३१	विजयजो	विजयजो
२९	१२	स्वाध्या	स्वाध्याय	स्वाध्याय	३१	वस्तु	वस्तु
२९	१४	है	है	है	३१	विनागत	विनागत
२९	१४	तत्त्वका	तत्त्वके	तत्त्वके	३१	विचार	विचार
२९	१४	अध्यात्म	अध्यात्म	अध्यात्म	३१	वरदान	वरदान
३०	३	वाले	वाले	वाले	३१	कालके	कालके

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पङ्क्ति	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३२	७	हू	है	४१	२०	अशुद्ध	शुद्ध
३२	११	मधि	मधि (अप्य)	४४	२	हो नहों	हो हो नहों
३२	१५	पर्यायोक्त	पर्यायोक्त	४४	२	अप्यक्त	(अप्यक्त)
३२	१७	अटकही	अटकही	४८	१	यहै	अत है
३२	१९	देपात	विज्ञात	४८	३	हिताक	हिताके
३२	१९	परमात	परमात	५२	२	साभ	सात
३२	२१	पौत्रिक	पौत्रिक	५२	२	पाधि	पेधि
३३	७	दूटनेकी	दूटनेकी	५४	१३	आर	ओर
३३	१५	स्वरूपका	स्वरूपके	५५	२२	॥१॥	॥१॥
३३	१३	बाह	बाह	५५	११	परकागक	परकागक
३४	२४	पर पञ्चम	परपञ्चम	५७	२२	अक	अक
३५	२	सवत्या	सवत्या	५७	१३	गव	गव
३८	६	आत्माक	आत्माके	५७	१५	अपार	अपार
४०	५	ठह	ठह	५७	१८	सलित सी	सलित सी
४०	११	हूषा	हूषा	५७	१८	करी	करी
४०	१९	निजप्रित	निजप्रिते	५७	१९	विस्तरी	विस्तरी
४१	१९	षय	षय	५८	२	निरपार	निरपार
				५८	९	उद्योत	उद्योत

पृष्ठ	पंक्ति	शुद्ध	पठ	पंक्ति	शुद्ध	पठ
५२	१६	शेक	६२	१६	शेक	६२
५३	२	पू ग	६३	२	पू ग	६३
६३	३	पू ल	६३	३	पू ल	६३
६४	८	फलावली	६४	८	फलावली	६४
६५	६	घाटि	६५	६	घाटि	६५
६७	६	चौदेह	६७	६	चौदेह	६७
६७	११	नगिय	६७	११	नगिय	६७
६७	१४	सब चूरे	६७	१४	सब चूरे	६७
६८	१६	ठारह	६८	१६	ठारह	६८
६८	१६	प्रभलन	६८	१६	प्रभलन	६८
६८	२६	बोपय	६८	२६	बोपय	६८
६९	२६	घर	६९	२६	घर	६९
७१	८	घर	७१	८	घर	७१
७२	४	जेरी (जेरी)	७२	४	जेरी (जेरी)	७२
७३	१	भरम	७३	१	भरम	७३
७३	८	घर	७३	८	घर	७३
७३	११	ठाता	७३	११	ठाता	७३

५२

पृष्ठ	पंक्ति	पद्य	शुद्ध	पठ	पंक्ति	पद्य	शुद्ध
७३	१६	का	की	८२	१६	शुद्ध	शुद्ध
७३	१८	घार	घोर	८२	२४	स्वादिमे	स्वादिमे
७३	१३	समुपदेन	समुपदेन	८३	१०	उत्त	उत्त
७३	२४	परब्रह्म्याणके	परब्रह्म्याणके	८३	१७	गृहता	गृहता
७३	२५	श्लोकां	श्लोकां	८६	१६	प्राचरण	प्राचरण
७४	६	कि	की	८५	३	एकक	एकक
७४	२४	भक्त	भूत	८६	६	मूर्ति	मूर्ति
७६	८	सोन	सोते	८८	८	प्राप्त्यागे	प्राप्त्यागे
७६	२५	जसे	जसे	८८	१३	दृतर	दृतर
७७	२६	दरकर	दरकर	८८	१६	याम	याम
७८	१	सो'क	पञ्चौकिक	८८	२५	करना	करना
७८	४	बारि	दारा	८८	२५	सय	सय
८१	५	गहा	रहा	९०	१८	राणीने	राणीने
८१	७	ता	तरे	९०	२२	घोर	घोर
८१	७	भोतर	भोतर	९०	२६	मिलेगी	मिलेगी
८१	८	हेतो	हेतो	९१	२१	नगरका	नगरका
८२	३	उम	उत्त	९२	१७	पहलाकर	पहलाकर
८२	१३	बिसेा	किती	९२	२१	पातकीमे	पातकीमे
८२	१३			९२	२५	म	म

पं०	वर्ष	वर्ष	म०	शु०	प०	प०	प०	शु०	प०	म०	शु०	प०
६४	८	८	उसका	उसका	१००	१००	१०	उसका	१००	मो	मो	१०
६४	९	९	गला	रखा	१०३	१००	२३	गला	१००	आपकी	आपकी	२३
६५	१	१	नी	भी	१०४	१०३	१८	नी	१०३	बजबिह	बजबिह	१८
६५	२	२	दीलता	दीलता	१०४	१०४	६	दीलता	१०४	अभुटिठयो	अभुटिठयो	६
६५	२३	२३	भो	भो	१०४	१०४	८	भो	१०४	अपतिभ,	अपतिभ,	८
६५	२५	२५	अपनी	अपनी	१०४	१०४	१०	अपनी	१०४	अतरमासाए	अतरमासाए	१०
६५	२६	२६	यक	करके	१०४	१०४	१६	यक	१०४	बोपकमण	बोपकमण	१६
६६	१	१	काके	करके	१०४	१०४	२०	काके	१०४	सजाभिया	सजाभिया	२०
६७	१	१	बही	बही	१०७	१०७	१२	बही	१०७	अपदि	अपदि	१२
६७	४	४	किय	किस	१०७	१०७	२१	किय	१०७	सनाड	सनाड	२१
६८	९	९	को	को ई	१८	१८	९	को	१८	साविक	साविक	९
६८	१२	१२	मिलताही	मिलता हे	१०९	१०९	१	मिलताही	१०९	चिहठ	चिहठ	१
६८	१४	१४	ही	ही	१११	१११	२०	ही	१११	पहोरे	पहोरे	२०
६८	२५	२५	ला	तो	११६	११६	१	ला	११६	तहसि	तहसि	१
६८	२५	२५	ता	तय	११६	११६	१	ता	११६	पंथे	पंथे	१
६९	३	३	दान	दिन	११६	११६	३	दान	११६	पाथे	पाथे	३
६९	२३	२३	राजाकी	राजाके	११६	११६	१०	राजाकी	११६	पाव	पाव	१०

(पेज ८ में चालु)

पृष्ठ	विषयके नाम	पृष्ठ	विषयके नाम
११८	द प्र	१	आत्म-मयन
११८	प्र दूसरा प्रकार	२	प्राप्तित्यान, सबभाषना, मूल्यांक
११९	य प्र सा प्र पौ प्र कायोत्तम प्र ब्रह्मचय प्र सचित त्याग प्रतिमा	३	समयन स्वस्तिक प्रबंध श्री मानसागरजी छाया चित्र
१२०	स्वयं आरभ त्या प्र अय या प्र स्वनिमित्तआहारादि त्या प्र अमणभूत प्र तथा मनातर नोट - प्ररणा	४	देा शरण
१२१	वे वि साम लोक	५	विषयानुक्रम
१२३	मगल लोक	६	गुडि पत्रक
१२४	प्रभु स्तुति	७	श्री चम्पकसागरजी छाया चित्र
		२०	तीय, धम, कम



❀ योगका महत्व ❀

ऽप्य पण्यक्तां लोकानात्म - तत्त्वविचारत ॥

गुवीना धीमता गेहे साभितायोऽभिजायते ॥ १ ॥

अथ - यदि कोई आत्मा योगी हो और कम की विचित्रतासे
आत्म विचारसे द्यूत हो अर्थात् योगसे भष्ट हो ता भी
योगकी अभिजाषाणा होनेसे देवादि को क्रुद्धि
पाकर पर पवित्र एता दुडिगागी और लक्ष्मीवान
के कुत्तरे जन्म पाकर मुक्त होता है ॥ १ ॥

॥ ॐ अहं नम ॥

— तीर्थ —

आत्मासे नहीं श्रीर टि तीर्थ
सम रस कुड धमाप ।
स्नान साते^१ पाप नासे
सत्या नन्द सो धाप ॥ १ ॥

ॐ ॐ ॐ

— धर्म —

धम धम सब ही कहे
धम नहीं धारा चीज ।
जड चेतनका भेद लिया
य ही धर्म का बीज ॥ २ ॥

ॐ ॐ ॐ

— कर्म —

कर्म तीन प्रकारक
द्रव्य भाव श्रीर नो ।
आत्मा चित आपका
रहे न कर्म एक सो ॥ ३ ॥

ॐ अर्हं नम

प्रार्थना

धदन हो धदन हा विश्व - विभूतिको धदन हो - (चाल)
पहेला धदन देव गुरुको दुसरा धदन मान पिताका
तिसरा धदन विद्यागुरुका, चौथा धदन गुणप्राप्तिको व-१
पचम धदन अधिक गुणीका, छठ्या धदन समगुणीका
सातवा धदन सध जीर्वाका आठवा धदन ज-मभूमिका व-२
चपकसागर कहे धदन करता गुण खजाना अतर भरता
दु खोसे हम कभी न डरत धैर्य सदा हम मनम धरत व-३

आत्मा भावना

भय भय भजन अतरयामी, करुणा रसका सागर तू
नाथ निरजन सकट भजन, तरे शरणा आया मैं
अज्ञान अंधेरा दूर करनको जगमें मूरज एक ही तू
तेरे बिना मन कहि न ठहरता न्योकार अर्ज मरा विभु -१

मैं शरणागत परमार्थ तू विशेष विशेष मैं क्या कह
किस नाम से किस रूप से ध्याउ तुझे मैं प्रदन कर
गम पड़ेगा जो मैं अतग्यामी मरा तू
तेरे से न अतर घात मैं सत्य कहूँ

नेमिनाथका का स्तवन

प्यारो लाग मने व्हालो लागे, गढ गिरनार मने प्यारो लागे (चाल)
 नेम प्रभुनु मुखडु जोता, अतरमा कई कई धाय
 राजुल रमणि रंक् बनीने, आसुडा आव्हे जराय प्यारो १
 थिलापणे जाणे विनोद करता, माडु मलकी जाय
 गारीना रोक्या नम रहता, मानु कुशी लज्जघाय प्यारो २
 धय घडीने धय अदियस जेना पाच दियस उज्जघाय,
 वधल पामता राजुल पहाची, व्रत गीत जेहना गघाय, प्यारो ३
 हरि प्रश्ने स्व नय भय भाळ्या, साभली सभा हरखाय
 नेम राजुल घणे अक्यता माधी, ससाग-पार पमाय प्यारो ४
 द्वि सहस्रने आगणिस साले, अपाढ वही अश्रिम जणाय
 सभ्या-नद आ अर्ध जपता, माड वही सामा न धाय प्यारो ५

ताल ध्रज थो शातिनाथ जिन स्तवन

राग — जिंदावाद् जिंदावाद् (मुगले आजम)

भय नागरसे पार उतारो नैया झूधे ना,
 मरी नैया झूधे ना, मरी नैया झूधे ना
 कर कल्याणकर कल्याण, आ जिनघर मरा, कर कल्याण (१)

शात सुधारस दशन तेरा, नयन कमल व्युं चदा,
 आनद अमीरस भर भर पीता, भाषकटोरे वदा
 ताल ध्रजमें तु दि धीराजे,

मनाहर मूर्ति तेरी कर कल्याण (२)

शांति जिनेश्वर साहच मेरा शांति नाम सुगन्ध

१ प्रणय २ माया बीज महित जे जपत नर अरुन-

अज्ञान अंधेरा दूर होगा जय,

हायमी नैया पाए कर कल्याण (१)

मसार ताप न महता भुजमे कर कल्याण महागज

मान सरोवर तरंग धेणी मम भाव धरमा हा आज

समता लाकर प्रभु गुण पाकर,

जीवन हा आवाइ कर कल्याण (२)

चंपकमागर प्रभु पाकर, हृदयमें धरु मी ध्यान

पावन होगा हृदय हमारा, जैसा गुरुगम ज्ञान

भव सागरमें ३ तरणी घाणी,

मुनि ४ महता ५ महान कर कल्याण (३)

१ प्रणय=अकार २ माया बीज=होकार ३ तरणी=नाथ

४ महता=महिमा ५ महान=घणा

श्री ताल ध्वज महण मुमितनाथ जिन स्तवन

(राग-दान उलट मरी दीजिये-अदेशी)

ताळ ध्वज महण प्रभु पंचम जिनवर देवर,

भाचो साहच तने कहे, हु किम मानु अमर ता १

मुजमम स्थिर स्थामि धात्रा मानु साचु कहणर,

अनुभव यिना हु किम कहु, आधरु अधिकृ यणर ता २

कह लाक भट्टे सदा, विणमळा जीव अज्ञानरे,

शानी यिना गुण कोण जमे,

विम भुलु भान रे ताळ

ध्याये विरति आदरी ध्याय भण्यो गानरे
 ध्याये तुज कथा तप तपु ध्याये धर हु ध्यानर ताठ ४
 मोश मार्ग भले दुकडो कोण रजळे ममाररे,
 मघत येदजार मालमा, तालध्वज भण्यो मारर ताल ५
 चैश शुदी केशादश्य दीठो गिरिदेष - विमानरे
 अतरे हर्ष थयो अतिघणो जीहा के फिम बहु मानरे ताल ६
 कर्तुं चामासु तुज धरणमा, धरस येदजार सत-दशरे,
 धपश मागरे सुमति थुण्या थाय सुमतिय मनवश रे ताण ७

श्री आत्मभावना पद

देखो भाई महा विकल ससारी, दुखित अनादि मोह के कारण
 गगद्वेष उरधारी देखा भाई (के टक)
 हिसारभ करत सुदृग समजे मृपा बोल धनुराई ।
 परधन हगत समर्थ कहावे, परिग्रह बद्धत बढाई ॥ देखो भाई १
 बचन राखे काय दृढ राखे भिटे न मन बपलाई ।
 यातदात औरकी और शुभ करणी दुख ददाई ॥ देखो भाई २
 योगासन करे पवन निराधे, आत्म वृष्टि न जाग ।
 कथनी कहत महत कहावे, ममता मूल न त्याग ॥ देखो भाई ३
 आगम बंद सिद्धात पाठ सुणे हिये आठमद आणे
 जाति लाभ कुल बल-तप विद्या प्रभुतारुप यखाणे ॥ देखो भाई ४
 जड शु राचे परमपद साधे, आत्मशक्ति न सुझे ।
 विनय विवक विचार ब्रह्मकी, गुण पर्याय न बृझे ॥ देखो भाई ५
 जमबाले जस सुणी संतोपे तप बाले तप शोपे
 गुणवाला परगुनकु दोष मतवाला मत पोपे ॥ देखो भाई ६

गुरु उपदेश सहज उदयागत मोह विक्रता गुरु ।
धीनय विजय सुजम यिलासी,अचल अक्षय निचि लुटा ॥ देखो भाइ ७

कर्ता श्री महामहोपाध्यायजी धीमद् यशाविजयजी कृत
श्री जैनत्र विष सजाय

परमगुरु जैन कर्णे क्यु हाथ गुरु उपदेश विना जैन मुठा
दर्शन जैन योगीय ॥ परम गुरु ॥ १ ॥

कहत कृपानिधि सम जल जीले, कर्म मल जे धाये, यहीर ।
पाप मल अग न धारे शुद्ध स्वरूप निज ओय ॥ परम गुरु ॥ २ ॥

स्याद्याद पूरण जा जाणे नय गर्भित जस घाचा, गुणपर्याय
ब्रह्म सो जाणे साही जैन है नाचा ॥ परम गुरु ॥ ३ ॥

पर परिणति अपनी करी माने किया गर्ब घलो, उनको जैन
कहो क्यु कहीये साहि मूरखमें पहेलो ॥ परम गुरु ॥ ४ ॥

किया मूढमति (जो) अज्ञानी, चाले चाल अपूटी, जैन जीवन ।
उनमें हि नहि कहेसा सब है शूटी ॥ परम गुरु ॥ ५ ॥

ज्ञान भाय ज्ञानी सबमा हि, शिष्य साधन सद्धहीय नाम भेवसे ।
काज न सिज्जे, भाय उदासी रहीये ॥ परम गुरु ॥ ६ ॥

ज्ञान सकठ नय साधन साधो, किया ज्ञान की दासी, किया ।
करत है धरत है ममता, आइ गले में फासी ॥ परम गुरु ॥ ७ ॥

कबहीक ज्ञान विनु नहि किया,कबहीक ज्ञान विनुनाही किया ज्ञान
किरिया दाना सग मिलत है क्यु जल रस जलमादि ॥ परम गुरु ॥ ८ ॥

किया मगनता बाहिर देखत ज्ञान शक्ति जस भाजे, सद्गुरु ।
शील सुण नहि कबहुं सा जन जनन लाजे ॥ परम गुरु ॥ ९ ॥

तत्त्व बुद्धि निजकी परीणती है, सकल सूयकी कुची जगजस ।
याद कथे उतदिको जैन दशा जस उंधी ॥ परम गुरु ॥ १० ॥

श्री अथात्म पद

परम प्रभु सब जग शब्दे ध्याव, जबलग अंतर भेद न माजे
तबलग कोउन पाये ॥ परम प्रभु ॥ १ ॥

सबल अंश देखे जय जागी जागीणु समता आवे ।
समता अध न देखे याको, चित धीदुरे भाग ॥
परम प्रभु ॥ २ ॥

सहज शक्ति और गुदकी भक्ति, जो चित जाग जगाये ।
प्रत्य गुण पर्याय से अपने, तो कोइ लय लगाये ॥
परम प्रभु ॥ ३ ॥

पढत पुराण वैद और गीता मुख अथ न पाये ।
इत उत फिरत गृहितरसनाहि, ज्यु पशु चरयित चाये ॥
परम प्रभु ॥ ४ ॥

पुद्गलसे चारो प्रभु मरा, पुद्गल आप छिपावे ।
उनसे अंतर नहि हमारा, अय कहा भागा जाये ॥
परम प्रभु ॥ ५ ॥

अलख अजर और अमर नीरजन सो प्रभु सहज सुहाव ।
अतरयामी पूरण प्रगटयो, सेवक यश गुण गाव ॥
परम प्रभु ॥ ६ ॥

भीमदू विजयानंदसुरी (आत्मारामजी) महाराज कृत अनित्य
भावना सज्जाय

यौवन धन धीर नही रहना रे ॥ आचली ॥
प्रातः, समयजा नजरेआव, मध्य दिने नहि दीसे ।
जा मध्याने सो नहि राते, क्यू विरथा मन होसे ॥ यौवन ॥ १

पयन जकोरे घादल यिणसे, स्थु शरीर तुम मासे ।
 लन्ही जल तरंग धनु घपला षयु बाधे मन आसे ॥ यौयन ॥ २
 बल्लभ नग सुपनकी माया इन में रागादि बैसा,
 छिनमें उडे अर्क तुल ज्यू यौयन जगमें बैसा ॥ यौयन ॥ ३
 घकी हगी पुरहर रावे मद्दमात रस मोहि ।
 वान दशमें मरीने पहुच तीनका खबर न कोही ॥ यौयन ॥ ४
 जग मायामें नही लाभाय छातमराम मयाने ।
 अजर अमर तु सदा निम्य है, जिन धुनी यह सुनी काने ॥ यौयन ॥ ५

दर्शन पाठ

दशन दय देयस्य, दर्शन पापनाशनम्
 दर्शन स्वगसापान, दशन मोक्षसाधनम् ॥ १ ॥
 दर्शनेन जिन द्राणा साधूना वदनेन च ।
 न चिर तिष्ठते पाप छिद्र दस्त यथोदकम् ॥ २ ॥
 वातरागमुख पूष्ठा, पद्मराग समप्रभम् ।
 अनेक जन्मकृत पाप, दशनन विनश्यति ॥ ३ ॥
 दशन जिन सूर्यस्य, समारध्यागतनाशनम् ।
 बाधन विस्र पद्मस्य, समस्तार्थ प्रकाशनम् ॥ ४ ॥
 दशन जिन चन्द्रस्य, सद्धर्माकृतवर्षणम् ।
 जामदाद विनाशाय वर्धन सुखधारिणे ॥ ५ ॥
 श्रीधादित्यप्रतिपादकाय, नम्यकृत्यमुरयागुणाणधाय ।
 प्रशांतरूपाय जिनश्वराय, देवाधिद्वयाय नमो जिनाय ॥ ६ ॥
 चिदान ईशरूपाय जिनाय परमात्मने ।
 परमात्मप्रकाशाय, नित्य सिद्धात्मने नम ॥ ७ ॥

नहि प्राता नहि प्राता नहि प्राता जगत्प्रये ।
 द्यौतरागात्परो देधो, न भूता न भविष्यति ॥ ८ ॥

नव तिलक

पूजा करनेवालेको प्रथम अपनेको नव तिलक करना चाहिये ।
 शिखा शीश की जानि, ललाट सु लीजिये ।
 कण्ठ हृदय अरु कान, भुजा गति लीजिये ॥
 कृष्ण हाथ अरु नाभि, सरस शुभ कीजिये ।
 तब जिनघर को भजो, तिलक नव कोजिये ॥ १ ॥

धर्माजन लक्षण स्वाध्याय

धर्माजन जो उ-हे कहना सुगी सयका चाहता है ।
 दु खी देख कर दया दिलकी, मनस कभी न हटाता है ॥ ध ॥ १ ॥
 पापी जीधर्म प्रेम लाय क अपना कर मनामा है ।
 अघसरमें उपदेश सुनाकर गुणोंमें आगे बढाता है ॥ ध ॥ २ ॥
 परपीडाकभी मनमें न धरता, सुख जीयाका चाहता है ।
 परधन पत्थर समान मानता परस्त्री जिसको माता है ॥ ध ॥ ३ ॥
 निहा नरककी खान हा मानता प्रशसा पुण्य स्थान है ।
 सयाग सतका सदा चाहता, हृदयमें नहीं कामका पास है ॥ ध ॥ ४ ॥
 प्रभु नाम में प्रेम लगाता सोऽह ध्यानको ध्याता है ।
 साऽह सोऽह रत्न हृदयमें आत्म ज्ञान को पाता है ॥ ध ॥ ५ ॥
 जन्म जरा और मृत्यु मार्ग छोडे सो आत्म ज्ञानी है ।
 धर्म में दाग तजकर चन्दा कर्म में दिग्दुभाता है ॥ ध ॥ ६ ॥

उद्य नीचका भेद मूल कर, मतपथको न चाहता है ।
 आत्म इश्वर एक ही माने, दया-दमन-दान चाहता है ॥ ७ ॥
 दया जगत को जननी जानो, दया मोक्ष प्रधान है ।
 दया दिलमें रखली जिम्होने, कर्म कटण विधान है ॥ ८ ॥
 'दम्पकसागर' दया भावमें सदा रमणता रखता है ।
 तर गये जीर्वा तर रहे जीवो, तरंग दया से बहते है ॥ ९ ॥

भजन

कहा मानलो ओ मोरे भेष्या
 भव भव डुलने में क्या सार है ।
 तू धनजा घने तो परमात्मा
 तेरी आत्मा ही शक्ति अपार है ॥
 मोग बुरे है, त्याग सजन ये,
 विपद करें और नरक घर ।
 ध्यान ही है एक नाथ सजन जा
 इधर तिरे और उधर बरे ।
 झूठी प्रीति में तेरी हार है
 वाणी गणधर किये हितकार है ॥
 लोभ पाप का पाप सजन,
 क्यों राम कहे दुख भार भरे
 शान कसौटी परख सजन,
 मत छालियों का विश्वास करे ॥
 डग आदों की यहा भर मार है ॥
 इन्हे जीते तो घेडा पार है ॥

नर तग का 'सोभाय' मज्जन ये
 हाथ लग ना हाथ लगना।
 घर आत्म रम पान मज्जन जो।
 जन्म भग और मरण भग।
 मोक्ष महलो का ये दी द्वार है।
 धीन रागी हा धनना मार है।

ॐ अर्धे नम

मोक्ष मार्ग

आत्मा जा सकरूप त्रिकरूप करता है, यह कर्म हेतु है।
 यह कर्म जब उदयमें आता है तब सारे कर्मों को भोगत
 हुआ जन्म मरण करण पडत है। यह भयरूप सत्कार है।
 इन्द्रियाँ और मन के इन्ट विषयों व विषय जय याद
 सुख है सा भणोव है अ य मयागी है पीछेसे विद्याग जय
 दु रा छुप व लड़ा है।

मन और इन्द्रियाँ प्रतिशुद्ध विषयाँ विषय ज य
 याद दु रा है। आत्मा अपनको नही पहचानता हान स सुख
 दुःख का अपना गिनता है। यह मानना केवल अज्ञान है
 अविद्या और मिथ्यात्व भी इसे कहते हैं। यह सत्कारमें भ्रमण
 करता है। परमतत्व प्राप्ति में विघ्न रूप है। श्रव याद से ही
 जान लिजिय कि फल की इच्छा रखे बिना तपा हुआ तप,
 कीद गद् क्रिया जपा हुआ जाप ध्याया हुआ ध्यान, और पढ़ा
 हुआ शास्त्र पाठ आदि कर्मोंकी निरजरा का हेतु है। कि तु
 सम्यक् तथा मना गया जड़ घतनका भेद अद्वैत भूत और
 नि शंक हाना चाहिये।

जितना अशमें सम्यग् ज्ञान उतना अशमें सम्यग् दशन होता है ।

जितना अशमें निर्विकल्पे दशाधी स्थिरता रहती है उतना ही निश्चय चारित्र्य होता है ।

जितना अशमें यात्र पदार्थोंका विवेकमे प्रिया गया त्याग उतन अशमें व्यवहार चारित्र्य होता है ।

निश्चयस सम्यग् दशन ज्ञान चारित्र्यही आत्मानुपम मोक्ष है और व्यवहारस सम्यग्दशन ज्ञान चारित्र्यही आराधना यह माक्ष्य मार्ग है ।

आत्म निरीक्षण

१ आत्मा आत्माका शत्रु है! आ मा आत्माका भिन्न है ।

२ जो वस्तु अपनी नहीं है उस वस्तु अपनी माननेवाला आत्मा अपनाही शत्रु बना जाता है, कारण कि जैसी भक्तकी श्लथमन को आस्वादन करती हुई स्वयं श्लथमानमें चीन्च जाती है वैसा ही पर पुद्गलमें राग रखनेस मोहमें लोंचा हुआ आत्मा धार गति रूप सत्कारमें भटकता है ।

३ जो आत्मा स्वः स्वभावका ज्ञाता है और अपनेमें ही मस्त रहता है कोईभी पर द्रव्य पर राग रखता नहीं है जेना मुहमें रही हुई जीभ कितन ही चीकने पदार्थोंको खाइती है तभी सदाने लिये चुली ही चुली दिखाइ पहती है जैसे आत्मा भी जगतके सर्व पदार्थोंका ज्ञातादृष्टा हात-रूप भी निर्लिप्त-निर्विशार होकर अनन्त अनन्त आनन्दको पाता है । उसेही आनन्दस्यो आनन्द आनन्द ही आनन्द ही है । शरीर,

इन्द्रिये आयु, श्वासाश्वाम, घचन मन विगने अपना किया हुआ विभाषवा फल है । यह विभाष करनेकी आदत आत्माकी अनादि कालकी है । यह आदत जयतरफ नहीं छूटेगी तबतब नसार सभुद्रमें गुलाट खात रहेगा । इमी कारण हे चेतन चेत चेत थोडा भी ममज फाल चुका कपि जैसा शोचता । वैना मानव भय चुका तु भी शोचे

गुण तीन प्रकारके हैं

दशन गुण, ज्ञान गुण, चारित्र गुण जड़ और चेतन यह दानो द्रव्य हैं सा दोनो गुणपायाय वाले हैं ऐसी जो ब्रह्मा यही सम्यग् दर्शन है । तथा, जड़ और चेतनका तात्त्विक अधभाव सो सम्यग् ज्ञान है । जड़से पर ऐसा चेतन द्रव्यमें तल्लीनता तथा जड़ पदार्थोंमें ध्यामोहित न होना सो सम्यक चारित्र है ।

दोष तीन प्रकारके हैं

माया शल्य निदान शल्य मिध्यात्व शल्य यह तीन दोष पुद्गल नग्दी आत्मामे अगर भयाभिनन्दिमें दाते हैं । त्याग वैराग्यमें भी माया प्रपञ्च रखनी जैसे कि मेरा मन कोइ भौतिक पदार्थोंमें मोहित नहीं होता है किन्तु अन्तरमें शिष्य माह, किमती यज्ञकी चाहना, शारीरिक सुखकी चाह अधिक भक्त बनानेकी चाह, मोहसे पुस्तक संग्रह करना, उपास्य बनाना इत्यादिक अनेक संश्रुते जीव माहित रहता हुआ भी निर्मादिका दमाम रखना यही माया शल्य दोष है ।

त्याग वैराग्य तप आदिके फल की ईच्छा जैसा राजा महाराजा धर्मार्थी इत्यादि क्रमिकी चाह, रखना यह निदान शक्य होय है ।

धीतराम देवता अधीतराम द्रव कहना या मानना, ममाधुको असममाधु कहना या मानना, सद्वस्तुको असद्वस्तु कहना या मानना, समारभी साधु को निरारभी साधु कहना या मानना असत्य पदार्थोंका सत्पदार्थ कहना या मानना अद्वका चतन कहना या मानना चतनको अद्व कहना या मानना इत्यादिक मिथ्यात्व दोष कहा गया है ।

प्रश्न —जा आदमी अद्व भूतिको साभात् चैतन्यमय प्रभु मानते हैं उन्हे मिथ्यात्व दोष नहीं लगता है ।

उत्तर —स्थापना निम्नपमें अद्व पदार्थकी स्थापना कर अपना सद्भावका आरोपन किया जाता है । पिंडस्थादि ध्यानक लिये स्थापना आलम्बन रूप है । जैसे भावनाशील आत्माको अद्व नाम में भी गुणवान् आत्मासेही लक्ष्य रखना पड़ता है, वैसे हि स्थापनामेंभी गुणवान् आत्माका लक्ष्य देना पड़ता है, ऐसा यदि नहीं समजा जाय तो निर्गुणिका नाम भी महाधीरादि शीआ जाता है तो उस क्या प्रणाम क्या जायगा ! अपितु कदापि न हांगा तो स्थापनाम चैतन्यका भाव लानेसे कदापि दोष नहीं लगता है ।

विश्व-शान्तिका संदेश

विश्वशांति चाहय मानवको शांति साधनोंका पहले जानना चाहिये । हे आत्मन् तुझे शांतिकी चाह होती पहले

(५) मैं अनादि कालसे इस संसार चक्रमें भ्रमण कर रहा हूँ मैंने अनेको जीव के साथ अनन्तवार अनन्त संघर्षोंसे जुड़ हुआ हूँ उससे किये गये राग-द्वेष व संघर्षों को भी धीतराग प्रभु की आज्ञाका पालन करता हुआ सर्व जीवोंको क्षमाता हूँ सर्व जीव मुझे क्षमा करे यही प्रार्थना ।

सत् पुरुषका लक्षण ।

चित्ताहादि व्यसन विमुख शोकनापापनीदि ।
 प्राज्ञोत्पादि भ्रमण सुभग न्यायमार्गानुयायि ॥
 तथ्य पथ्य व्यपगतमल सार्थक मुक्त बाधम् ।
 यो निर्दापि रचयति यद्यस्त युधा सत्प्राहु ॥ १ ॥

प्रश्न - सत्पुरुष कित्से कहना चाहिये ?

उत्तर - जिसका यचन गुणवान हो, उनहीको सत् कहना चाहिये ।

प्रश्न - यह यचन कैसा होना चाहिये ?

उत्तर - जिसको आहादक-खुश करनेवाला हो, व्यसनसे विमुख हो अर्थात् इन्द्रियों के विषयोंमें खींचनेवाला न हो, शोक और तापको हटानेवाला हो, सुननेमें सुखदार हो, न्याय मार्ग से अनुकूल हो, तथा-सत्यगुण सहित हो, पथ्य हितकारी हो, पूर्थापर विरोध रहित हो, निर्दापि-ध्याकरणदोष रहित हो उस गुणवाले यचनाको मोलतेहो और आशरण उस मुतावीक करने हो उनहीको साक्षर यग सत् कहते है

ॐ

यौयने विक्वरोत्येष, मन सयमिनामपि ।

राजमार्गऽपि रोदति प्रायृत्कालेकिलाहुरा ॥ १ ॥

युवानी में सवमिर्षा मन भी विवर्लिन दाजाता है ।

‘ सुधानी दीधानी है ’

“ सुधानी गद्दा पच्चीसी बट्ठाली है

जिसने युवानीको सभाउ गयी और महाघार की महार छाप भुमने नहीं दी वही इस विगडा कीर पुरुष है । यानि युवानीमें इन्द्रियों पर समय लाना वह ता आग पर पैर रखकर नहीं जलता जमा दुष्कर है । उसी इन्द्रियजीतको पुरुषोत्तमकी उपमा दी जाती है ।

सामान्यता युवानीमें सवमिर्षाका भी मन बलिन दाजा रहता है, तो दुमरे सामान्य जीर्षाका ता कहना ही क्या ? दूगता से दिखलात है कि यपाऊनुमें राजमागभी अहुरित हो जाता है जैसा ही सवमि भी युवाशब्दामें जानापयोगम स्वलिन हाथ तो मन बंधल हो जाय उनमें आश्चर्य ही क्या ? तस्मान् युवानीमें मनको जीता उनिको कोटि कोटि धन्दन ।

दाई अक्षर धर्म के ही आत्माही उन्नति करते हैं ।

श्लोक- बाल्यादेधचरेद् धम मनिय खलु जीवितम् ।

फलाना मिथ पशाना देह नाशा विनिश्चित ॥

अर्थ - बाल्यकालमें ही धर्मको आचरण करना चाहिये कारणकि जीर्षाका जीवन अनित्य होता है जैसे फल पका हुआ पयन (हवा) का झाका लगनेही गिर पड़ता है उसीतरह जीर्षाकी देह नाश होजाता है ।

धर्म दो प्रकारका है। व्यवहार धर्म और निश्चय धर्म। धायक धर्म और साधु धर्म। अथवा लौकिक धर्म और लाकात्तर धर्म। लाकात्तर धर्म धायक और साधु-मुनि धर्म संयुधि है धर्म का। आत्मासे स्वरीदनकी वस्तु नही है धर्म ता आत्माका मूत्र (निजी) गुण है जो व्यवहार धर्म पात्रत है उ हे निश्चय धर्मकी प्राप्ति हाती है। व्यवहारसे बहुतसे भेद है जैसा दारशील तप य समय भाय यगरह मय व्यवहारके भेद है जाकि धायक य मुनि दानोवा ही पात्रता चाहीये। प्रारम्भम दानको प्रधानता है कारण की जीवका भग्न वादता है यह दूसरे जीवको उपयोगी वस्तुका दान करता है य दानी जीवको आस्तिकता य अनु कम्पा पूयक दान दना चाहिये दिया गया पदार्थ अनित्य है यह फिरमी दानसे कीनि आदिकी वृद्धि य नम्रतादिकी पुष्टि हाती है। यदि अशानी जीव भी भाय नदित दान करता है ता यहभी परम्परासे मान्यका अधिकारी होता है ता फिर हानोका तो कहना ही क्या है।।

प्रश्न - दानका जिन्होने पुण्यका फल बताया है सो पुण्य कर्म पिड है यह जड है ता जड २ धमका अनुषह करता है आश्रु रूप है य हुनको आत्माका धम कहना यह सत्यसे परे। (जुदा है) आश्रु यधका कारण है य यध मोक्षको रोकने वाला है अर्थात् इससे जीवका मुक्ति नही मित्र सकती इसलिये मोक्ष चाहनवाली आत्माको आश्रु य यधका मार्ग दिखालान यह ता घोर मित्यात्य है।

उत्तर - दयानु प्रिय कार्य में कारणका उपचार किया जाता है। कारणमी दो प्रकारका है, नित्यकारण य अनित्यकारण, नित्य कारण हमशा साथ रहता है य अनित्य कारणकार्य हाते ही छूट जाता है जैसे कटि प्रदेशमें तुंया पाधकर जो नदी तैरकर

पार करता है तब हाथ पैर तो हिलाने ही पड़ते हैं नदी पार होनेक बाद वह तुम्हेंको छोड़ जाता ह पर हाथ पैरोंको साथ ले जाता है वैसेही पुण्य आमय कारण तुम्हें समान है व सवर-निर्जरा रूपतय हाथ पैर क समान है ।

देवपूजा गुरुपास्ति स्वाध्याय मयम तप ।
दान च पट्सुकार्याणि गृहस्थाना दिने दिन ॥ १ ॥

प्रायश्च (ग्रहस्थ) धर्ममें एकतय है दय पूजा, गुरुयदना स्वाध्याय मयम पालना, तप करना ओर दान देना आदि है व अप्रतमम्यग्दण्डि क तप मयम छाडकर याकीक है उनमेंसे दान देत ममय प्रिति भाव जरूर होना चाहिय कारणकि प्रेमभाव क बिनाकिये हुने कार्यसे आत्मगुणाकी प्राप्ति नही होती ।

दान तीन प्रकारका है भक्तिदान प्रीतिदान, व अनुकम्पनीयदान सा भक्तिदान सा सुआदि गुणोजनाकी भक्ति व प्रेम, आदरसहित देना चाहिये । प्रीतिदान साधर्मा प्रायश्चाइयाको प्रेम व आदर पूवक देना चाहिये । व अनुकम्पनीयदान अ य जीर्वाका (गरीब दु खीजना) दया पूवक देना चाहिये व दान करते समय पात्रका विचारभो करना चाहिये । वहभी तीन प्रकारका है । सुपात्र, अपात्र व कुपात्र सा सुपात्र जैनमायु व्रती, अपात्र दीन दु खी गरीब व कुपात्र कुगुरु आदि ।

पात्राऽपात्र विचक्षाऽन्ति धेनु पन्नगयारिष ।

तृणतलजायत श्रीर, श्रीरा सजायत विषम् ॥१॥

अर्थ - नीतिकार कहतेहैं कि पात्र अपात्रका विचार करके दान करना चाहिये । द्रष्टांते घतलायाहें हि सपको यदि दुधभी पिदाया जाय तो भी विषही प्राप्त होगा जबकि गायका

घाम खिलानेपर दूधकी प्राप्ति होती है ॥ अग्य च अय पात्र के दो भेद बताए गये हैं सुपात्र और पात्र । जीव मात्र पात्र है, जेमा बरसातका नहीं बरसने लायक कोई प्रदेश नहीं है । यह सब जगह बरसता है । जैसे दानी सबहीका दान देता है । परन्तु गुणवानको सुपात्र समझकर भक्ति भावसे दान देता है । उसीसे दाताको पुण्यानुबन्धि पुण्यकी प्राप्ति होती है । यह सबर निर्जरा धर्मका महकागो होता है और ब्रह्म पात्रमे किया गया दान सत्कार अनुकूल विषयको देनेवाला होता है । परपरा में त्याग धर्म का कारण ता बनता है । उन्नीसे उसको विष की उपमा, सत्कारिक सुख देनेवाला दानसे दी गई है । और सुपात्र में देनेसे सबर भाव, निर्जरा भाव रूप दूधकी उपमा है । सुपात्रमें किया हुआ दान शीघ्र मोक्षका कारण बनता है उस में जिस दाताको भावनामें ब्रह्म त्याग भाव और मोक्षका ही ध्येय रहता है सो सब दान शीघ्र ही मोक्ष मार्ग का महकागी हात हैं । यदि सत्कार-सुख-भाव दाताके हृदय में बसता है तो सब दान सम्यग् दशन हुये पीछे सबर निर्जरा का कारण होत है । ब्रह्म पात्राऽपात्रका विवेक करना चाहिये । नहीं कि अपात्रमे दान का विषेध करना है, और सुपात्र मे विषेय गिनाना है । विवेक के कारण गधा और घोड़ा एक न गिनना चाहिये ।

सुपात्रके तीन भेद है जघ य, मध्यम और उत्कृष्ट । जघ य-सुपात्र अविरत भावक आश्रित । मध्यम सुपात्र देश विरत भावक आश्रित । उत्कृष्ट सुपात्र निर्गन्ध मुनि । अथवा बकुल कुशीलादि मुनि भी आत्मा राधक करने वाले है ।

अपितु दान व तीन मद भी माने गये हैं, तामसी दान, राजसी दान और सात्त्विक दान। अहभाव या तो कटालक वा लज्जासे डरने किया हुआ दान तामसी है। तथा रयाति की इच्छा, इह लोक परलोक मन्धी सुख की इच्छा रखता हुआ दाताका किया हुआ दान राजसी है। और फटकी इच्छा रखे बिना नीतिस कमाया हुआ द्रय अर्थात् चित्त चित्त और पात्र की शुद्धि पृथक् किया गया दान मो सात्त्विक गीना गया है। और भी दान चेतन लायक द्रव्य व चार भेद है। १ ज्ञान दान, २ अन दान, ३ धस्त्र दान ४ और आरोग्य - औषधि दान है। ज्ञान दान को जीव दूसरे भय में नस्कार रूपमें साथ ले जा सकता है और ज्ञानसे भय-भयारका अन्त-नाश भी कर सकता है। ता ज्ञान दान सबसे उत्तम है। ज्ञानसे रक्षण व लिये ज्ञानियोंका वस्त्र पात्र, अन औषधी आदि का दान करना भी जरूरी है। ज्ञान दान आधेय है और अ य दान आधार भूत है। पर तु ज्ञान बिन और वस्तुपे जड स्वभाव की होनेसे परभव में साथ नहीं जा सकनी है और ज्ञान चेतनका गुण होनेसे चेतन व साथ ही जाता है। यह बात भावज्ञान की है, कारण कि द्रव्य ज्ञान पुस्तकादी रूप है साध्यभाव ज्ञान व पुस्तकादि साधनरूप है सो माधमें कैसे जावे ?।

अब ज्ञान दान बिना दूसरे दान कबल पुरुषार्थ घातक है, और भूर्खताको बढ़ाने वाले है। उनीस अज्ञानी को दिया गया दान अनुकम्पनीय है तो शृङ्खलाश्रमी को अभय दान, सुपात्र दान अनुकम्पादान उचित दान कीर्तिदान भी करना उचित है। अभय दान-अपने से किसी का भय उत्पन्न न होने देना सुपात्रदान माभार्थिका जरूरी वस्तु देना सा। अनुकम्पादान-अभ्यागतको देना सा। उचित दान-बिना माग भार्खदु दास

कपायकी मदताको करता है, तप गुणमें जोड़ता है, पुण्य पिंड या शुभ प्रकृतिका बंध करता है, पाप प्रकृतिका नाश है, कमसे स्वर्ग और मोक्षका हेतु भक्त है ॥ ३ ॥ तो ऐसी सुंदर बातें जानकर कौनसा मञ्जन दान देनेमें प्रमाद करेगा। " शुभस्य शीघ्रम् " अपितु षोड नहीं।

अथ शियल धर्म क और जरासा बिचारेंगे - शील गुण मानवके लिये अत्यन्त उत्तम गुण है। एक कविने कहा है कि - " एतत् जगते दीपा मेर प्यारे, एतत् जगत् दीपो। अतः शीलमत जगत्मे दीपक तुल्य है। इन्हिमें शरीरकी रोशनी बढती है, याणी भी सत्यनिष्ठ बनती है मन मजबुत होता है। देवन्द्र भी शीलवानक पर पूजते हैं, भूत पिशाच ढाकण शाकण और मलिन देव शीलवानको नहीं सताने है, लोकमें सुंदर ख्यातिका पाता है काह भी भाता यहन घेटीक लिये आधेय भूत होता है। शीलवान सज्जन दिनप्रतिदिन अपनी उन्नति करता है। जो शीलसे रहिन है वह सदा धुरे दानसे औचित रहता है यत -

‘ कामान्तरमजति प्रयोधयति च स्वस्त्रीं परस्त्रीं न यो
दत्तस्तन जगत्स्य-कीर्तिपटहागात्रे मयो कृचक ।
चारित्रस्य जलाजालिर्गुणगणारामस्य द्वावानल
सङ्केत सकलापदा शिवपुरद्वारे कपाटो वृद्ध ॥ ४ ॥

धर्म - जो पुहप कामसे पीड़ित होकर अपनी स्त्रीको तजता है, और परस्त्रीका चाहता है या इनक साथ कामकिडा करता है उसने अपने लिये अपकीर्तिका पट यानी ढाल पिटवाया है, और अपने गौरव मर्यादाके प्रपिकाकी तरह कृचडयाता है,

सयमको जलाञ्जलि दी है गुणरूप वागमे उवाच्य लगाई है, सकल आपदाको आमत्रण दीआ है और माभ नगरक द्वारको ठोक ठोक क दूढ घघ किया है ॥ ४ ॥ ता मङ्गलाने प्राथना है कि शीलवन पालक सुखी हो। आग शीलकी महिमा अधिक अधिकतर बताते हैं कि-यत -

(मालिनी घृतम्)

इरति कुलकलक उम्पते पापपङ्कम् ।
सुवृतमुपचिनोति श्लाघ्यतामातनाति ।
नमयति सुरधर्म दत्ति दुर्गापमर्मम् ।
रचयति शुचि शील स्वर्गमाशुं सलील ॥ ५ ॥

पानी-जो आदमी या स्त्री पवित्र शीलका पालन करते हैं वह कुलक फलकको पृच्छते हैं और पाप मलका धाते हैं सुवृतको जमा करते हैं लाकार स्तुति पात्र बनते हैं देवताओंस नमस्कार कराते हैं और दु ख तथा उपमर्ग उन्होस दूर भागते हैं स्वर्ग और माक्ष लीलाक साथ मीलजाते हैं ॥ ५ ॥ काटी वागी धन्यवाद शीलक तथा कि पढना ? ॥

अथ तप धम को कुछ विचारेंग — जो आत्मा तपस्या करता है, वह पूर्वक चीकने बधे हूँ कर्मको जलाकर ग्वाव करता है। तप जिनश्वर भगवतोंने बारा प्रकारका बताया है। उममे छे घाह्य है और छे अभ्यन्तर है। अतश्च उणा दरिका, वृत्ति मक्षेप, रसत्याग, वाय बलेश संलिप्तता कृत्ते पर पकाई गई रसोईको अशन कहते हैं। पानी दूध छाश धिगनेको पान पीण लायक पदार्थ कहते हैं। मेया खजूर मोपरादि

पदार्थको या बिना पकारे खाने याग्य वस्तुका खाद्य कहते हैं
 मुख शुद्धि करने लायक पदार्थ जैसे भोगरी धनीपकी दाल,
 पूर्ण विगरेका म्याथ कहते हैं । यह खाद्य आहारक त्यागको
 अनशन या उपवास कहते हैं । आगकम दो चार कथल कम
 खानसे उनीदरी तप होता है । खाने पीने पहरने ओढणोंके
 पदार्थ तथा घर वास्तु और कुछ आपरनकी चीजका प्रमान
 करना यह युति स तप तप है । छ रन या ता घी घृथ, दही,
 गुद मीठा-मीथी, तेल मधु मकरन, मरा-सगाथ मासादिका
 त्याग करना उसे रनत्याग तप कहते हैं । कश का लुछन
 करना गर्मीकी रतमें आनापना लेना नदी किनारे बैठकर
 शरदमें ठंड महता नग पैर यात्रा करणी, विगरेकी कायकेश
 तप कहते हैं । काइ भी तरहका आगन लगाकर बैठना यातं
 अंगापाग मफोच कर बैठना उसे मैलीनता तप कहते हैं
 दूसरे लाक जिस देख शकत है उसे बाह्य तपकी सज्ञा कहते हैं । जं
 दूसरे लाक देखने नहीं पाते हैं, उसे अभ्यन्तर तपकी सज्ञा कहते हैं
 यह भी छे प्रकारकी है । प्रायश्चित्त विनय वैयाथरुच, स्थाध्या
 ध्यान कायात्सर्ग । दोपका दूड लेना यह प्रायश्चित्त तप है
 गुणजनका विनय करणा सा विनय तप है । विनय यानी
 नमस्कार करणा नीचे आसन बैठना विगरे । छोट बडे गुणी
 जनकी सेवा करणी सा वैयाथरुच तप है । पढे हुए शास्त्रजं
 का स्मरण करना याता नया शास्त्र थावना सो स्वाध्याय त
 है । एक विषयका एक बित्तस मनमें चिन्तयन करना सो ध्या
 तप है । पशासन या खडगासन, सुखासन लगाकर ध्यान कर
 उसे कायात्सर्ग तप कहते हैं । यह बारा प्रकारका तप सम्य

है कि अपने मित्रका कुछ न कुछ उपकार करना चाहिए।

यत् — 'जीवन्तु जनस्य सयं क्लेशस्यमनघजिता ।

पाप्नुवन्तु सुखस्यवस्था, येर पाप पराभयम् ॥ ८ ॥

यानी-सयं जीव क्लेश व्यसन-दुःखस रहित ही पाप और पराभयका त्यागकर सय सुखी हा

'सखे सुखिन म तु, सयं स-तु निरामया ।

सयं भद्राणि पश्य-तु मा च शत्रु काऽपिदु खित ॥ ९ ॥

और भी जैनेतर ग्रन्थामें यह मैत्रीभाव बताया गया है कि सख सुखी रहा सय निरोगी रहा सख कल्याण करने वाले बना, कोईभी दुःख न पाया ।

अथ प्रमोद भावनाको विचारेंग - कि जिस धीतरागी

भगवानको धन्य है की जि होने रागद्वेषको जितकर आत्मशुद्धि को है। धन्य है भयत्रेणि आरुह पूज्यका। धन्य है अप्रमत्त प्रमत्त गुण स्थान वर्ता आचार्य उपाध्याय तथा मुनिराजोका धन्य है देशविरत भायक भायिका तथा अविरत भायक भायिका कि जि-होन जड चेतनका भेद ज्ञान पाया है और आत्महितमें सदा जाग्रित है। जैसी माता अपना बच्चेमें बहुत अयगुण दिखतभी पर दो गुण देखकर खुसी मनोमन मनाती है वैसे ही मैत्री भाययुक्त सज्जन पुरुष या स्त्री दूसरे यत् किंचिद् गुण देखकर प्रशन्न होते हो। यत्

'मिथ्यावृशामायुपकारसार, सताप सत्यादिगुणप्रसारम् ।

षदा-यता-धैर्यनयिक प्रकार, मार्गानुसारीत्यनुमोदयाम ॥१०॥

मिथ्याय चिनका गया नहीं है उसे जीव भी तो परोपकार

करते हैं संतोष और मत्यादि गुणाका धारक हैं और यिनयी हैं मार्गानुसारी गुणवानोंकी हम अनुमोदन करते हैं । अर्थात् 'प्रमादमात्माद्य गुणे परेषा येषा मतिमञ्जति साम्यसि धौ । वेदीप्यते तेषु मन प्रमादो गुणान्तयेत विशद्भी भवति' ॥११॥ परस्य गुणाको प्रा न करका प्रमत्त रहें हैं । जिनकी बुद्धि ममता समुद्रमें डुबति है । तिनका मन उल्लासको पाता है, गुण उनका हास बनते हैं । और भी—

‘ तप धनयमायुक्त चेतनाज्ञानचसुषाम् ।

चिञ्जिताश्रययाणा, स्वतत्त्वाभ्यामशालिनाम् ॥ १२ ॥

जगत्त्रय चमत्कारि, चरणाधिष्ठिताम्मानाम् ।

तद्गुणेषु प्रमादोय मद्भि मा मुदिता मता ॥ १३ ॥

यानी—जो पुरुष या स्त्री तप स्वाध्यायम नियम ध्यानादि युक्त चित्तवाले हैं तथा ज्ञान भूषित सभू है और पांचे इन्द्रियोंको विषय कषायोंको जीता हैं आ म तत्त्वको अभ्यासमें मग्न हैं । और जगत्का आश्चर्यकारी चारित्रको पात्रते हैं । उन्हीके गुणामें प्रमाद धरणा आती है इनका स पुरुष मुदिता भाष कहते हैं ॥ अथ कर्हणाभाष विचारिय — कारुण्यमार्तागिहजाजिहीर्षेत् — दु खीजनोंपर दया लानी चाहिये जा जीर पूर्व प्रारब्ध अनुसार लुला लगडा, डुठा, अ धा, काढी नामरद हरिद्री, पराधीन बस्त्रहीन, भूखा प्याना अनेक रोगोसे पीडित, यैसाको अन्न पानी बस्त्र औषध विगरे देकर दया लानी चाहिये । यत् —

(शिखरिणी वृत्तम्)

उपायानां लक्षै कथमपि समासाद्य विभव

भवाभ्यासात्तत्र ध्रुवमिति विषयताति हृदयम् ।

अथाकस्नाइस्मिन् विकिरति रज मुरहृदया,

रिषिर्ना रामायणाय चरणे चरणे ॥ १४ ॥

यानी - लासो उपायोस जा यत्किंचिद् विभय एकदा क्रिया
गयाहै । उसीमें पुर्य अभ्याससे प्रेम करता है । परन्तु अकस्मान्
निर्दय हृदय घाले विधि औरकी ओर हो कर घेठता है ।
शत्रुका आक्रमण आये या रागत्रा उपद्रव हाउ अथवा मृत्यु,
भय जरादि आकर गड़ेहा जाये तब बह दीन हीन बनजाता है ।
ऐसे जीयो पे शानी कहते ह कि करणा करा । अब जो
आत्मा अति क्राधि अतिमानी, अतिमावाशी अति लोभि हों ।
साता ब्यसतफ सेयी हा । दश गुरु धम र निद्रक हा । नास्तिक
शिरामणि हा । ऐसे जीयकी र निद्रा करणी चाहिये न प्रशमा ।
उदासीन भावसे उमकी दया स्वानी चाहिय । यत —

' लोत्र लावा भिन्नभिन्नस्वरूपा भिन्नोभिन्ने कमभिर्ममभिद्रि ।
रम्यारम्यभेष्टितै वस्यकस्य तद्विद्रिद्रि स्तुयन् र यत या ॥१५॥ ,

यानी- इस विश्वमें लोक भिन्न भिन्न स्वरूपर हैं । जूदे जूदे
कर्म मर्मम भेद हुवे है । सुदर और खराय घटा करनेवाल हैं ।
विद्वान लोक किमकी निद्रा करे और किमती म्नुति करे ।
उहके लीप उदासीन - माध्यस्थ भाव ही परमार्थ है ॥

अब अनित्य भावना विचारने योग्य दानेस विचारी जाय ।

धीशानी भगवत परमाते हैं कि आयु यायुक जैसा
घंचल है । मम्पदा आपदाका घर है । इन्द्रियोक नियय स-याको
आवादाक रग तुल्य है । मित्र स्त्री पुत्र स्वजनादिकका सुख
दुख और इन्द्रजाल समान क्षणभंगुर है । ता धर्म चक्षुसे देखी
गई फोनसी वस्तु परलोकमें साथ जानघागी हैं ? । जो वस्तु
अ तमें धोका देती है । उसपर विश्वास करना युद्धिमत्ता
नहीं गिना जाता । यत

‘ प्रातर्भ्रातर्गिहाऽपशतरुचया ये चतनाचेतना,
 दृष्टा विश्वमन प्रमोद त्रिपुरा भावा स्यत सुन्दरा ।
 तास्तत्रैव दिन त्रिपाक् विरस्तान् हा नश्यत पश्यत-
 भेत प्रेतहत जहाति न भय प्रेमानु चध मम ॥ १६॥

पहा पर कवि रत्न महापाध्यायजी महागज श्री १०/ विनय
 ज्ञानजी फरमात है कि- हे भाई! प्रातः समयम चेतन अचेतन
 पदार्थ देखे जा रहें हैं वह कसे हैं स्वच्छ रुचिकर, विश्वको
 प्रमोद कर और स्वतः सुन्दर है। सो उन्नी दिन ही
 उनको विरस होते हुये देखत हैं, खेदकी बात है कि
 दिल इताश हा जाना है। ईसी सनारम प्रेम करने योग्य
 मरे लिये काइ वस्तु नहीं हैं। ओं भी-श्री शुभ चात्र
 प्राचार्य देव फरमात हैं कि-

“ ये चात्र जगती मध्ये, पदार्थाधितनेतरा ।
 ते ते मुनिभिरुद्दिष्टा प्रतिश्रणयिनश्चरा ॥ १७ ॥ ,

यानी इस जगत्में जो चेतन और जड़ पदार्थ हैं उन्हे सब
 महर्षियोंने क्षणक्षण म नष्ट होनेवाले विनाशीक बतलाये हैं। जो
 प्राणी इ-ह नित्यरूप मानता है वह भ्रममें भूला पड़ा है जो
 सम्यग् विचार नहीं कर सकता है ॥ अय अशरण भावना भावा भाई।

जो छ खड पृथ्वीका स्वामी चक्री है। और देवाका
 स्वामी देवेन्द्र है। शारदात्म धरदान पाया हुआ कथीन्द्र है।
 मुद्देका षोलानेवाला धनधतरी बैच है। उन भी विकराल
 प्राणीका काळत्र क्षपाटम आफ मृ युव शरण होना पडता है।
 उ हे बचानवाला काइ नहीं है तो दीन दु खी पामर प्राणीका
 ता कहेना ही क्या ? यत -

“ शोचन्ति स्वजन मूर्खा, स्वकर्म-भोगिनम् ।
नामान युद्धि विध्यस्ता, यमद्वन्द्व-तरस्थितम् ॥ १८ ॥

अर्थ - अपने कर्म फलको भागता हुआ कोई स्वजन मरजात दे तो मूर्ख लोक शाक करता है किन्तु अपन स्वयं यमक दादोमे रहा हुआ युद्धिहीन आ मा अपना शाक नहीं करता यह अस्यत् मूर्खता है । जगतमें देख गुरु धर्म-स्वात्मनिष्ठ पिनाको शरण करने लायक नहीं है । अब ससार भायता भाइये इस ससारमें अनादि कालसे भ्रमण करता हुआ जी सुक्ष्म निगादादि चीरामीलाव यानियाम राग द्वेष अज्ञा मिथ्याश्चक्र आधीन हुआ है । उनका फल स्वरूप अनन्त दुः समय समयमें पाता है वही ससारम छूटनेके लिये भवि जीवनेसे प्रयत्न करना चाहिये । यत -

अनन्तपुद्गलाद्यन्तानन तानन्तरूपभूत ।

अनन्तशो भ्रमत्येव जियाऽनादिभयणथ ॥ १९ ॥ ,

अर्थ - अनन्त पुद्गल परावत करता जीव अनन्तानन्त रूप पर्यायोक्ता धारण की है । सम्यक् दर्शनके अभावसे, या अपात्तिसे, अनादि अनन्त भय भटकही करता है । सम्मग्न माद्य किये गये पुरुषार्थोंसे जीव ससारसे छूटत है और छूटने औरभी ससारकी चिडबना देखाते हुए शास्त्रकार परमाते है कि-

माता पुत्री स्वप्ना भाषा मैव नपद्यतेद्भजा ।

पिता पुत्र पुन सोऽपि, लभत पौत्रिक पदम् ॥ २० ॥

अर्थ - इस संसारमें प्राणीकी माता मरकर पुत्री होकर जन्मती है और बहन मरकर स्त्री सवधसे जुड़ती है और फिर यही

स्त्री मन्त्र कापकी पुत्री हाजाती है । इसी प्रकार पिता मन्त्रर
पुत्र रूप धारण करलैना है तथा फिर वही पुत्र मन्त्रर पापपद
भी ग्रहण करता है । इस तरहम यह परिश्रमनशील मेमरका
ज्ञानकर किस मज्जनका यगायन हा ? । परद्रयम प्रीति जा
समाग्भाषणु लोकी जान है स्वरस्य परद्रस्यका भद्र शाप पाया
हुआ ही भगवाण है । धनुगतिममममम हृत्नकी इच्छायाग
वही मन्त्रा मुमभु है ॥ अथ एव य भाषनाका स्मरण करेग -

एकथा एक ही पमा है कि इनक पिता इसकी गति नहीं
होती है । राजा गायवे साथ मिलजात हुए भी अपन
स्वरूपमे स्वाथ रहता है । जेना हो आमा स्ववहारम अन प
पर्यायम मिलता हृत्नकाभी निभयम अपना स्वरूप एकत्वका
नहीं छोटता है । न चतन जडय साथ तद्वयन् हाता है न
उतनका जडम अनुग्रह हाता है न कुछ अकार हाता है ।
कथन अनादियात्म अपना स्वरूपका अज्ञात ज्ञानमे परद्रस्यमे
मम उभाषण रगता हुआ ममारम प्रमण करता है । उपराक
गुड एकत्वभाषका विचार ता जीयका मा गति अपन ज्ञानमे
ही है यत

'एव एव भगवानयमा मा ज्ञानदशन तरङ्ग मरङ्ग ।

सर्वमयहुपव विपतमतद् ध्यातु गीकरणमथ ममत्वम ॥ २१ ॥

अर्थ - ज्ञान दशन चारित्र गुणमे रगा हुआ यह आत्माही
भगवान स्वरूप है इसकी मय करपना है । उसमे ममता रगनी
सा ध्यातु करनजागी दु रादा है ।

एकता समतापता-मनामा मान् विभायय ।

लभस्य परमानन्द-मन्पद तमिराजयन् ॥ २२ ॥

अर्थ - एक समभावम ही आत्माका विचारकर, और परमानंद रूप सम्पत्ताका नमिराजकप्रपिथन प्राप्त करा । जाग्रामे जन्म, मरण समसग्रह करना और कर्मका पत्रका भागना विगरे मय एक ही आत्मा करता । तां विरदूमरेकी आशा रमनी यह अज्ञान ही है । अब अत्य भावनाका विचारेंगे-

जो आत्मा परधर्म प्रवृत्त करता विनाशको पाता है यह एक कहनी मिथ्या नहीं है । कर्माणु न प्राप्त कर ज्ञाना आत्माने कानसे कानसे कष्ट प्राप्त नहीं किया ? आत्मा विभावका कर कर शुभाशुभ पुद्गलाका आवय करता है, ऐवम-कीटक मुतावीक अपनेसे आप ही कर्मान् यज्ञ जाता है । तां हे आत्मानु विचार करकि घर टाट, डगली, पुत्र, पौत्र, स्त्री भाई बहन माता पिता धन धान्यरूप परिग्रह विगरे अपना साथम कार नहीं आता है । मन घाणा और काया भी अपनेसे पर है तां दूनरका क्या कहना ? ॥यत -

अत्य वि न पश्यति, जडा जन्ममहादिता ।

यज्ञम मृत्तु संपात सधणापि प्रतीयते ॥ २३ ॥

यानी-यद्यपि उक्त प्रकारसे शरीर और आत्माक अन्यपना है तथापि सन्नाररूपी विशाचसे पीडित मृद प्राणी क्या नहीं देखते कि यह अयपना जन्म तथा मरणक सम्पातम सर्व लोककी प्रतीतिमें आता है । अर्थात् जन्मा तथा पुराना शरीरका साथ गया नहीं, और मरता है तथा यह शरीर साथ जाता नहीं है । इम प्रकारसे जीवकी पृथक्ता प्रतीत जाती है ॥ अपने अपने मत्त्वकू सर्व वस्तु विलसाय । ऐम चिंतये इशसे जीवको तब परपदा र्म समत्य भाव न होना चाहिये ॥

अब अशुचिभावना विचारेंगे -

(मालिनी छन्द)

अजिनपटलवृद्ध पञ्जरा वीरमाता,
 उदितकृष्णपगन्ध वृष्टि मृदु गान्धु ।
 यमयदननिषण्ण राग भागि द्रगद,
 वयमिह मनुजाना प्रीतय स्यात्तरीरम् ॥ २८ ॥

अर्थ - ह मृदु प्राणी ! इस ममारम मनुष्याका यह शरीर चर्मक पटलम् (पर्दा) टका हुआ हाड़ाका पित्ररा ह तथा विगही हुई राधकी (पीवकी) दुर्गन्धमे परिपूर्ण है, एवम् कालक मुखम बैठ हुए रागस्त्रि सर्पाका घर है । एसा शरीर प्रीति करनक याग्य नारी या पुरुषका वेत्ने हा ? यह बड़ा आश्चर्य है ॥ अपि च -

। मदाया त वृतम् ।

स्नाय स्नाय पुनरपि पुन स्नाति शुद्धामिरद्धि -
 पार पार धन समलतनु चन्दनैरधयत ।
 मृता मानो वयमपमरा प्रीतिमित्याश्रय ते,
 तो शु य त कथमयकर शक्यत शाद्धमथ ॥ २९ ॥

अर्थ - इस मसारम मृदु आत्माए अपवित्र शरीरकी बार बार शुद्ध और सुगन्धी पानीसे स्नान करा है फिर च दनादि द्रव्यम विठपन करत है और अपनेको मानते है कि हम पूण पवित्र हुए हैं, परन्तु नहीं विचारत है कि कचरेक टगका शुद्ध करनेका कौन शक्तिमान है ? कहनेका मतलब यह है कि आत्माता मदा पवित्र-निर्मल है, अमूर्तिक है और उसकी मल लगताही नहीं है किन्तु वमोंके निमित्तमे जो हमर शरीरका,

सबध है उस यः अज्ञानम-माहम अपना मानकर भला जानता है, और मनुष्याका यह शरीर मध्यमया अपवित्रताका घर है। इस कारण इसमें जब अशुचि भावना भाए, तब इसमें विरक्तता लाकर अपने निमल आत्मस्वरूपमें रमणशी रुचि हा। इस प्रकार अशुचिभावनाका आशय है ॥ अथ आध्रय भावना विचार

। प्रहयणी वृत्तम् ।

मिथ्या-वाचितिशपाययाग मज्ञाभ्यां मृदितिभिर्गधया प्रदिष्टा ।
कर्मणि प्रतिममय स्फुटैरमीभिवद ता भ्रमयशनाधमति जीया ॥
॥ २६ ॥

यानी मिथ्यात्व-व्यथिषा या अज्ञान, अधिगति कपाय, मन वचन कपाय याग और आहार भय-निद्रा मधुन यह चार मज्ञासे आ माओ कर्मोंके आयणका प्रहण करत है, प्रति ममय उस कर्मनि अधा गया जीव आतिघशम मन्मरम भ्रमण करता है पेना महात् पुरुषान उवदश किया है। मिथ्या वसे शुद्ध तत्वकी रुचि नही हाती है अधिगतिस मधर-कर्मोंका रुकना नही हाता है, कपाय-क्रोध-मान-माया और लाभम अशुभ कर्मोंका आध्रयक साथ बध हाता है शुभाऽशुभ यागम शुभाऽशुभ कर्मोंका-पुण्य-पापका बध हाता है चार मज्ञा भी माय अशुभ योगका ही कारण है। जैसा नदीका जल तत्रायका द्वार खुल्ला रहनसे प्रवेश करता है, वैसा ही आत्मा रूप सरोधरमें विमाय रूप द्वार खुल्ले रहनसे कर्मरूप जल प्रविष्ट्य हाता है। और भी

मास्तनुयच्च कर्म याग इत्यभिधीयत ।

स पथाध्रय इत्युक्तस्तत्त्वज्ञानविशारदे ॥ २७ ॥

अध-मन-घाणी कपायकी क्रियाको याग कहत है और इस

जोगर्वा ही तरयविशारद्वान (महर्षियान) आशय वना हे ।
 यह स्वल्प तत्प्रायशुद्धमे कदा हे, यथा- 'वाप्रवाह मत्
 कप्रयाग मत्प्रायव ' ॥ इति ॥ अत्र सवत् भावना विचारणे -

जा जा उपायस आशयका राध हाय उम उपायस
 अयात् सम्यक् धृष्टास मिथ्यात्वका मयमस अघिरति ताभवका
 शुभ ध्यानस दुष्कर्तिका चित्तवी स्थिरतास मचल्ययागाका
 श्रमास क्रोधका ननतास मानका मरुतास प्रायासा निष्पुढतामे
 लोदका अन्यभी आशयक कारणाका मयत् भावस दकनाहि
 चादीय । यत् -

मवाद्यनिराधाय मयत् न प्रकीर्तित ।

द्रव्यभावविभक्तं मट्टिधा भिद्यत पुन ॥ २८ ॥

अर्थ- ममस्त आद्यर्थां निराधका मयत् कदा हे । धृष्ट द्रव्य
 संवर और भावमयत्वे भेदस दा प्रकारका । ध्यानस कर्माका
 उदानका प्रयत्नाका द्रव्य मयत् कदा ह और ममाय कान
 रूप कर्मप्रदणकी क्रियाका रुदनस भावमयत् हाता हे । येना
 परम आगमका कर्मान ह ॥ अत्र निजरा भावनाका विचारणे-

जिसस धीजरूप कर्म गणजात हैं उसे मरुदुप निजरा
 कहत हैं यह निजरा जीवाका मयाम और अकाम दा प्रकारकी
 हानी हैं । इनमेंस पहिली सयाम निजराता धन धारियाका होती
 है और अकाम निजरा मिथ्यादृष्टि अघिरति सम्यग् दृष्टी
 आदि जीवाका हानी हैं । जिस प्रकार कुर्वाण फलोका पकना
 एक ता स्वय ही हाता है दूसर पाउ दनमे भी हाता है ।
 इसी प्रकार कर्माका पकना भी है अथात् एक ता कर्माकी स्थिति पूरी
 हानपरफट्टकर कर्मभव हातें और दूसर सम्यग्दर्शनादि

सहित तपशरण करनेसे धर्म नष्ट हो जात है-धर्म जात है यत -
। उपजाति धृतम् ।

यथा सुवर्णस्य शुचिस्वरूप दीप्तं कृशानु प्रगती करोति
तथात्मनः कमरजा निवृत्त्य, ज्यातिस्तपस्त्रिंशद्दीकरोति ॥२९॥

अर्थ- जैसा तेजस्वी अग्नि सान्ध्या शुद्ध करता है, वैसा ही
तपस्वरूप अग्नि आत्मा पर लग रूप धर्मको जगत्कर आत्माको
शुद्ध करता है ॥ अब धर्म भावनाका चित्त करने में व्यवहार
और निश्चय धर्मका विचार करना यही धर्म भावना है।
व्यवहार धर्मका फल कहते हैं कि-

। मदाक्रान्तानृतम् ।

प्राज्य राज्य सुभगद्वयिता, नन्दनानन्दनाना ।

रम्य रूप सरसकविता-चानुरीसुस्वरत्नम् ।

नीरोमत्य गुणपरिचय सज्जनय सुयुद्धि ,

किं नु धूम फलपरिणति धमकल्पद्रुमस्य ॥ ३० ॥

अर्थ - व्यवहाररूप धर्म यानी पुण्यरूप धर्म जो कल्पवृक्ष समान
है उसीका फल - बड़ा राज्य, सुन्दर स्त्री और पुत्र, सुन्दररूप
और वाक्शक्ति, मधुर कंठ नीरोगी शरीर गुण जाननेकी
शक्ति सज्जनता मद्दुयुद्धि ज्यादा क्या कहें? यह सब शुभ वाग रूप
धर्मवृक्षका ही फल है। निश्चय धर्म या आत्म धर्मका फल तो
मान ही है।

यत - दशलक्ष्मयुत सोऽयं जिनैर्धर्म प्रकीर्तित ।

यस्याः शमपि समेव्य, विन्दति यमिन शिवम् ॥ ३१ ॥

अर्थ- यह धर्म जिसके अक्षमात्र भी सेवन परके समयी मुनि मुक्तिको प्राप्त हात है उस जिनके भगवान् दश लक्षण युक्त बहा है ॥ सो इतना है ।

तितिया मादय शौच,मात्र मत्पसयमी ।

दशचयतपस्यागादिभ्य य धर्म उच्यते ॥ ३१ ॥

अर्थ- शमा १, मार्दय २, शौच ३, आज्ञा ४, मत्प ५, मयम (सर्व) ६, दशचर्य ७, तप ८, त्याग ९, और अदिभ्य य १० ये दश प्रकारके धर्म हैं । सो शुद्ध व्यवहाररूप है, जिसमें गग छेप सबथा नाट हा गया है वही निश्चय धर्म है । व्यवहार साधन है और निश्चय साध्य है ॥ अथ लोक साभाव भावनाका भाविये

जितन आकाशम जीयादिक चतन अरेतन पदार्थ हानी पुहपोन देख है, साता लोक है, । उसके घडार जो कथल मात्र आकाश है उसे अलाकाकाश कहते हैं । तीन भुवन सहित यह एक अन्तमें सब तरफसे अतिशय वेगशाले और अतिशय बलिष्ठ तीन घात बलियासे उडित है और ताड़वृक्ष आकार सरिखा है वह शाश्वत है इदिका करता कोई नहीं है, हमी लाकाशमें जीय और जड पदार्थ अपनी २ पर्यायकी करत हुए रहते हैं और यह लोक छ द्रव्यका (धर्म अधर आकाश, पुद्गल, जीय और कालरूप है विस्तार अ य ग्रन्थमें देखीय । इस भावनाका सन्धित अभिप्राय यह है कि छंद जीयादिक द्रव्याकी रचना है । जा सब द्रव्य अपने अपने स्वभावके क्रिय हुए भिन्न भिन्न तिष्ठते हैं । उनमें आद आरंभ प्रय है । उनका स्वरूप यथार्थ जानकर, अथ ममता छोडकर, आ मभावना करनाही परमाथ है ममस्त द्रव्याकी यथार्थ स्वरूप जानना चाहिये सिद्ध भवान् दूर हा जाता है यत -

एव एको भाव्यमानो विधिगया, गिज्ञाना स्वाग्मानमभ्यर्षदनु ।
 स्पर्शं प्राप्ते मासं चाभ्यर्षतीना गुणायवास्या मसौक्यप्रसूति ॥
 ॥ ३३ ॥

अर्थ- इनीतरह विधे विधे युक्तिम लावनी भावता भावता ह्यु
 विमानियावा मः स्थिरताया प्राप्त होता है और मायो स्थिरतः
 हातो हूह आम्माकी अ पाप्मसुग प्राप्त जाता है ।
 अथ योधि वृत्त भावताका विचार करन-

अनादि कायका जा लाव स्वहृष उमीमें ज्ञेय विधि
 यानियाका प्राप्त करकरयानी गिगाह नारव असुग भुवनपति
 न्यस्तम याणय तर नियज्ञ, मनुष्य, स्वातिर द्य सय था ।
 नथत्र, प्रह तारक यमानिक द्यादिय पयायीका धारण करता
 हुआ भी ज्ञेय जयतक मध्यगू दशा प्राप्त नहीं करगा है तयतक
 ममारमागरका अ त गहों पाता है । कितनय भीय मध्यग दर्शन
 पाकर भी ज्ञेय ज्ञामनशी आशतता करकर वृत्तर्म योधि प्राप्त है ।
 धीरकाल ममारम भवत है, ता मज्जनाका विचारणा स्वादीय
 वि यत —

(शास्त्रविक्रीडित युक्तम्)

यायहेहमिद गदैनं मृदित ना था जराजजर,
 यायत्यक्षकद्वयक स्वयिपयज्ञानाथमाश्रयम् ।
 यायच्छापुरभदुर गिजटिन तायदुधयस्वना,
 वासारैम्पुटिते जले प्रक्षलिते, पालि कथ वध्यत ॥ ३४ ॥

अथ - जयतक यह देह रागने पीडित न हा और वृद्धावस्थामे
 जजरित न हो, तथा हाग्प्रयाका समूह अपना २ विषय प्रण
 करनमें सशक्त हो, और आयुष्य पूर्ण न हा तयतक
 मत्पुरुषाः अपना दित साध्य करना चाहिये, जय तलाय पुत्र
 गया तत्र पात्र कैसी बाधी जायगी ? ॥ इस भावताका

माराश यह है कि- सत्सग वरर जड चतनका भेद शान समज लना चाहिए" 'इत सग भायताओन निरतर रमन हुए शानी जन इमी लाकमें रागादिहकी बाधा रजित अतीन्द्रिय अधिनामी सुखवा पात है अथात् ययल शानादका पात है ॥

अय-निष्ठय धम ता सत्वाका निद्रुम्यरप नी है ॥ इति लाकातर धमक दा भइ सम म ॥

लाकिक धममें अत्याग यागकी साधना है । उममें यम नियम, आमन प्राणायम प्रत्याहार धारणा ध्यान और समाधि यह आठ जग हैं । लाकातर धममें आथक धमकी अगारा प्रतिमा है और मुनि धमकी बाहरा प्रतिमा है ॥

अय आथक धमकी अगारा प्रतिमाका स्वरप जानिए । अम्ना दिगम्यरी है ।

प्रथम दश प्रतिमा

पुंवर मरियाइ मत्तवि यमणाइ जो थियरजइ ।

मम्मत विगुद्धमइमा दमन मयआ भणिआ ॥ १ ॥

अथ- पाथिक नष्टिक और साधक इस प्रकार आथक्य तीन भइ है । पाथिक आथक यह हो सका है जो मधम प्रथम धी जिन द्दयर प्रतिपादित सान तरवाका यथाय धदान कर । अथ कि धका मुलही अडा है-विश्वाम है । यिना यिरया मकधम पथवा अनुयायी हा नहीं गन्ना । इसका कारणएक यह हो है कि सुख-शांति और प्रेम य तीना धमक अहू है और ये यिना विश्वाम क यथार्थ नही हा सके है । इस त्रिये जिन आगावा हृदयमें धारण करता हुआ कयाया क धमनेक द्विय मदाचारका पावन कर, वाण कि कयाय नी

प्रगट्ट हानेमें अशरोधा है । पात्रिक धायकका वर्तव्य
 ' जिनदशन १ जठगाठन २ मिशा भाजनत्याग, ३ पाच
 उद्वर याग-बडफट्ट-पीपलफट्ट-कट्टमर-वाफर-फल-उद्वर
 ४ मध त्याग ५ मसुत्याग ६ मान-याग ७ और जोष दया
 प्रतिपादन ८ ये आठ मूठ गुणांका पालन करता है । अभ्यासक
 लिय पात्र अणुवन (हिमा-छठ-चोरी-कुशीलका त्याग और
 पग्निहका परिणाम । तीन गुणवन, चार शिभावन आदि वर्तीका
 पात्रन करता है । जुभा खेठना मानभक्षण, मध पान, शिकार
 गलना, चोरी करना, वैश्या ममन करना परस्त्री सेवन करना
 य मत्तस्यमना उभय दानु लोकमें दु खदायक है यह समझकर
 त्याग करता है । जिम वस्तुका स्वाद केर हाता है, गध भेद
 होता है यम जोषकी उत्पत्ति घाला हा येना अभक्ष्यकी संयन
 नहीं करता है । यात्र और अभ्यंतर शुद्धिक लिय पूर्ण
 प्रयत्नशील होता है । पर आवश्यक । देव पूजा १ गुरुउपासना २
 स्थायाय करना ३ मयम पाठन ४ तप धारण करना ५ और
 सुपात्रका दान दना ६ कर्मों का नियमित करता है । ये मध
 कतव्य पात्रिक धायक है । अचिरति धायकका उपर कहे गये
 छ कतव्यमेंस चार कतव्यका (देवपूजन, गुरुपानना स्वाध्याय
 और दान करना पडता है ।) और चिरति धायक
 छ कतव्यका पाठन करता है । य सब कतव्य पात्रिक
 धायक है इन कतव्य साथ धार्मिक नीति और व्यवहार
 नीति भी पालन करना चाहिये । मयमे प्रथम पात्रिक धायकको
 २२ दाप रहित मय्यक दशन निर्दाप पालन करना चाहिये ।

नैष्ठिक धायक उक्त ममस्त कतव्यका पूर्ण रूपसे पालन
 करता है तथा मय्यक दशनकी विगुडि विशेष रखता है ।
 ग्यारह प्रतिमाये नैष्ठिक तथा माधक धायककी होती है ।
 २३ न प्रतिमा धारण करनवालेकी भी उक्त कर्तव्य पालने पडने है ।

दुसरी छन प्रतिमा

पद्य अगुस्वयाद् गुणस्वयाद् इवति नः तिलि ।
निषयास्वयाद् अतामि विज्ञानि विद्वियमि ॥ २ ॥

अर्थ- पांच अगुस्वय तीन गुणस्वय और चार शिभास्वयों का नियमन वाक्य करता है यह छन प्रतिमा ५।२ है।

पाजान्निशानि निग्दि मन्व मन्व यत्तन पद्य ।
गुणस्वद यन्वार इवताय मद्य परिमाण । ३ ॥

अर्थ- श्रुत हिमा-गुण-शारी वृत्तीलना श्यात और परिषद परिणाम य वाच अगुस्वय ।

जे तमवाहय भीया पृ थ जिन्दिना न दिनिद्वया ।
ए परिद्विय निणुवागण न पन्म पद् शू ॥ ४ ॥

अर्थ- जो आवास नीय मय तेर यम जीवों का नहीं माफना तथा बिना प्रयाजत पर्व द्वय जागोही हिमा नहीं करना या प्रथम अदिनापु-यन है ।

अलिय न चंपनीय तालिनः करतु मन्व यद्यपि ।
रागण य द्वागण य णय विद्विय यव शू ॥ ५ ॥

अर्थ- राग द्वयम अनीति यद्यत मनी वदना और जिन यद्यतां वदन्म विनी जीवोही हिमा हाता हा चेता मन्व यद्यत भी नहीं शोचना या मन्वाप्यन है।

पुरगामि पट्टणाहमुपद्विय न न य जिद्वियश्रीलरीयः ।

तस्म दाह शूलययः ।

अर्थ- नगर, गाम और चौग आदिमें पडा हुआ, भूला, हुआ, गिरा हुआ पराया अथवा) इत्य नहीं लेना सा अर्थात् अणुव्रत है।

प०रसु इत्थि सथा अणनहीडा सयावियज्ज ता ।
 मूलयड थभचारी जिणेहि भणिजे पथयणम्मि ॥ ७ ॥

अर्थ- पथर दिनामें सयथा स्त्री मायका त्याग करना परस्त्री का सयन नहीं करना, अन्नग छोडा नहीं करना सा अर्थचर्याणुव्रत है।

ज परिमाण कीरइ धण धाणण हिरण्ण क चणाइण ।
 त जाण पचमथय, णिदिन्मुवात्मगाइयण ॥ ८ ॥

अर्थ- धन धा य र-न सुवर्ण आदि परिग्रहणका परिमाण करना सा परिग्रहण परिमाण नामका अणुव्रत है। इस प्रकार ये पांच अणुव्रत हैं

पु-पुत्तरइकिरणपच्छिमासु काउण जोयण पमाण ।
 परदो गमणणियसी, दिनि गुण थय पढम ॥ ९ ॥

अर्थ- पुर्यात्तगादि चारों दिशामें परिमाण कर उत्तक बाहर नहीं जाना सा प्रथम दिग्गव्रत गुणव्रत है।

थयभंगकारण होइ जम्मि देसम्मि तत्थणियमेण ।
 कीरइ गमणणियसी, त जाण गुणथयय विदिय ॥ १० ॥

अर्थ- दिग्गव्रत आभ्यंतर दिशाओंकी मर्यादाकर बाहर नहीं जाना तथा जिन देशमें वतक भंग होनेकी संभावना हो ऐसे देशमें नहीं जाना सो द्वितीय दिग्गव्रत नामक गुणव्रत है।

अय इड पास विक्किय, कूडवुला भाणकूड परिमाण ।
 ज तग हो ण कीरइ त जाण गुणथयय विदिय ॥ ११ ॥

अर्थ—अनघद्वह पापापदेश, हिमक दान दु घृति, अपव्यान, और प्रमाद चर्चा, भद्रम पात्र प्रकार हैं। तथापि इनक अनन्त भेद हात है इन मयका यही अभिप्राय है कि जिस कार्यसे कुछ प्रयाजन विशेष मिद्ध न हाता हा और हिमा तथा क्लेश परिणाम अधिक हात हा येम लाहक शास्त्र, लाठी आदि हिमाका व्यापार, झुटी सराजू पाट पात्र आदिस व्यापारगदिका त्याग करना सा तृतीय गुणव्रत है।

अ परिमाण कीरु मंडण तयुल गध पुष्पाण ।

न भागविरु भणिय पटम सिक्खायय सुत्ते ॥ १२ ॥

अर्थ— एकवार भागनेमें आनयाली धोजे—पान सुपारी, घिलपन करने योग्य पदार्थे गधपुटी अतर तल पुष्पद्वारादि वस्तुआका परिमाण करना सा प्रथम भागविरति शिक्षाव्रत है।

सगसत्तीप महिला वरथाभरण जनु परिमाण ।

न परिभोय णि सुत्ती, विदिय सिक्खायय ज्ञाण ॥ १३ ॥

अर्थ— वार २ भोगनेमें आय अथान् एक वस्तु तीन वार भागनेमें आय उस उपभाग कहते हैं। उपभाग रूप स्त्री वस्थ, आभरण आदिक सेवन करनका नियम करना सो वृमरा शिक्षाव्रत है।

अतिहिस्मसविभागो, तिदिय सिक्खायय मुणेयथ ।

तत्थ वि पचाहिधारा, णया सुत्ताण मग्गेण ॥ १४ ॥

अर्थ— अतिवि सविभाग नामक तृतीय शिक्षाव्रत है, तथापि पाच अधिकार हैं सा शास्त्र मार्गसे जानना। जिसन तिधि पर्व औम्नशादिकका न्यागा है। सा अतिविधि है। वह जघन्य मध्यम उत्कृष्ट भेदसे तीन प्रकार है तीर्थकर उराम और गणेशकी

मध्यम है और मुनि जघन्य है । अथवा । आचार्य उत्तम है
उपायाय मध्यम है, और मुनि जघन्य है । अथवा निर्मग्न
मुनि उत्तम है पुलाकलन्धिय त मध्यम है, वकुश कृशील मुनि
जघन्य है । अथवा मुनि उत्तम है, विरति प्रायक मध्यम है
अविरति प्रायक जघन्य है । पात्रमें अन्न वस्त्र औषधी तथा
उपयोगी वस्तुका दान करना भी उत्तम है । तथा चैत्य
चैत्यालय सिद्ध क्षेत्र शास्त्रादिमें दान देना भी उचित है

धरिउण वस्थमेत्त, परिग्गह छड्डिऊण अवसेस ।

सगिहे जिणाण्य वा तिविहाहारस्स वास्मरण ॥ १५ ॥

अ कुणदि गुरु पयासे, मम्मालाङ्कण तिविहेण ।

सँल्लेहण चउत्थ, सुत्ते सिक्खावय भणिय ॥ १६ ॥

अर्थ— वस्त्रमात्रका धारणकर, अवशेष परिग्रहका त्यागकर अपने
घरमें अथवा जिनालयमें सल्लेखना धारण कर । वन कलन्धिय
समाधिभरणसेही होती है इतना ही नहीं कि तु समाधि भरण
आत्मसिद्धिका अंतिम उपाय है—सुगतिका पीज है ॥ समाधि
भरण विधि प्रतिकार रहित मरणका कारण उपस्थित दानपर
सान्ध्यभाय और शांतिसे धेयपूजक, क्रोधादि विकार रहित
शरीरका विसर्जन करना समाधि भरण है । और उसकी सिद्धिक
लिये क्रमसे तीन प्रकारके आहारका त्याग कर गर्म जल अथवा
तक (छाश-भट्टा) का सेवन करे और अनाश्रयका होनेपर
उत्सर्गाभी त्याग करे । अपनी पर्यावमें त्रिये हुए भले धुरे
कार्योंकी आलाचना पुरस्क प्रतिग्रभण करे, पद्यानाप कर, और
सबसे क्रोधादि विकार भावोंकी क्षमा मागकर शांतिसे णमोकार
मंत्रका ध्यान धरता हुआ शरीरको छोड़े । यह चौथा सल्लेखना

नमक शिभावन है। इस प्रकार दुमरी प्रतिमा धारण करनेवाला
 धारक इन बाह्य वस्तुओं का पात्रन करता है।

तीमरी सामायिक प्रतिमा

जिनपरम धम्म वेदय परमैऽ जिजात्तयण जिण्यपि ।
 ज वेदण निभाण, वनेइ सामाह त सु ॥ २ ॥

अर्थ- धारण और आभ्यन्तर गुरुत्वो धारणकर पूष अथवा
 उत्तर दिशाकी तरफ मुग्गरमकर, पदागत निर्भय स्थानमें ३२
 आयतना करना हुआ ४ घणाम (दिशापरता धैर्य गैर्यालय
 मूर्ति आदिवा) धारण निशामें कर और स्थिर मन धारा
 बाधाम समता पूषक सामायिक कर। सामायिकमें कृतिसत ध्यात
 और चिन्ता छाड़ देनी चाहिये। जिन दय, जिन यचन
 जिन धर्म जिनालय और पद्यपरमस्ठीक गुणाका चिन्तन
 ध्यान धरना स्तुति आदि विशाल करना सा सामायिक है।
 समताम रागद्वेष और उभय उन्वाद्यक कारणाका परिस्थान
 करना सामायिक प्रतिमा है।

शोधी प्रोपधोपधान प्रतिमा ।

उत्तम महस जदणण निविह पानह विहाण मुदुदिहठं ।
 मगततीपमानम्मि, यउसु पयसु इ कापस्य ॥ १ ॥

अर्थ- पापधापधान उत्तम मध्यम और अधम्यक भक्षण तीन
 प्रकार हैं। उत्तम वह है कि जिनमें धारणा और धारणाके
 निश्चल पदान्त पृथक् उपवास करना-धारी आहारका त्याग
 करना इसमें समस्त प्रकारक आरंभका त्याग करदेना चाहिये।
 निर्भय हाकर निश्कयतापूर्वक पंच परमस्त्रीका ध्यान करना

चाहिये। मध्यम समस्त हिमाय आरम्भकी छोड़कर उपवास करनेसे हाता है। जघन्य आम्ल अथवा एक अनकी ग्रहण कर स्वाध्यायादिस शांति लाभ करता हुआ धर्मसेवन करनेसे हाता है। पर्वक दिन पापधोषघान करना मोचीयी प्रतिमा है। अष्टमी चतुदशी तिथिमें पापधापघान करना चाहिये।

पंचमी सचित त्याग प्रतिमा।

जंघज्जी जदि हरिय तय पत्त पयाल वंद फ७ वीय।
अप्पासुग च सल्लि सचित्तणिवित्तिम टाण ॥ १ ॥

अर्थ-सचित वस्तु-हरित अरुरपत्र फल वद, धीज औ
अपासुव जलादि सेवन नहीं करना मा पंचम प्रतिमा है।

१

द्विधा मथुन त्याग घा रात्रि भोजन त्याग छट्टी प्रतिमा।

मण वयण काय वद काग्निदानुमादेहि मेहुण णवधा।
त्रियमम्मि जो वियज्जदि गुणम्मि मा मायउ छेदा॥ १ ॥

अर्थ-मन, वचन, काया वद तीन योग और कृतकारि
अनुमोदनासे ये त्रिकरणसे दिना मैथुन सेवन नहीं करना
छट्टी प्रतिमा है।

सातमी ब्रह्मचारी प्रतिमा।

पुञ्जुत्तण विवहाणपि मउण मव्वदा विवज्जतो।

इत्थिक्खादि नियती मत्तमया णुण वधचारी सा ॥ १ ॥

अर्थ-त्रियोग त्रिकरणस नव प्रकारस याचज्जीव दधी-मानुष्य
और त्रियञ्जिणी स्त्री तथा नपुमक्क साथ और हस्तकर्मोदि
मैथुनका त्याग शरीर विभूषा, अतिमायाहार, रसीलाहा
स्त्रीकथादिका त्याग करना सो सातमी ब्रह्मचारी प्रतिमा है

१ जो दिवा मैथुनका त्याग न कर शक्ता है सो रात्रि भोजन
त्याग करे ॥

आठमी आरभ त्याग प्रतिमा

ज किं वि मिहारांभ यउ धारै या मया विषउजेदि ।
आरभणित्तमदि मो अत्तम सायभा भणिआ ॥ १ ॥

अर्थ-यिकिचिन्-धाहा रहून पर सवधी आरभ मदा त्यागता हे सा आरभत्यागी आठमी प्रतिमाधारी सायक है । पर सवधी सर्वथा स्वय आरभ नहा करना ही बेस्ट है ।

दुन परिग्रह त्याग नवमी प्रतिमा

मुद्दण थाधमल, परिगट द्दिकुण अवसम ।
तद्वि मुद्दण ण करदि जाणि मो सायभा णयमो ॥ १ ॥

अर्थ-अपन जरूरी यन्त्रादिका रखकर दाकीक भग्य परिग्रह त्याग करना तथा रखहुअ यन्त्रादिमें मुक्तता नही रखता सा द्दशपरिग्रह त्याग नवमी प्रतिमा है ।

अनुमती त्याग दशमी प्रतिमा

पुठो वा पुचुठ वा णिय गदि परेदिमगिदकउजे ।
अणुमत जा ण करदि वियाणसा सायभा दसमा ॥ १ ॥

अर्थ-कोह प्रश्न कर या न भी कर स्वयस्व लिये या परवरक लिये अथवा अपना मतस्थममें आरभका कायमें अनुमति-आदेश नही दताहै सा दशमी प्रतिमाधारक है ।

धारमी उहीठ त्याग प्रतिमा

धवारसम्मि टाण उकिठो, सायभा द्यह मुधि हा ।
वस्थेग धरा पदमो काथाण परिगटो विदिओ ॥ " " —

अर्थ ग्यारवा स्थानकमें उन्कृष्ट भाषक दो प्रकारके होते हैं ।
 कवल कीपीनको रखनवाग पेल्लु और सहर विगरे वस्त्र
 रखनवाला श्रुद्धुन भाषक है इ हाकी क्रिया कर्म घनात है ।

तप घय नियमाशामय गेच कारेदि पिच्छागणहेदि ।
 अनुपहा धम्महाण करपते एक ठाणम्मि ॥ २ ॥

अर्थ- दानो प्रकारके उन्कृष्ट भाषक तप, व्रत नियम,
 सप्रम, ध्यान और प्रथमकी नमस्त प्रतिमाए सदाचार नियमसे
 पालन करता है । निर्दापि आहार एक समय पाणिपात्रमें लेता
 है । कपायिका विजयी पश्चाद्दश प्रतिमा धारक है ।

इस प्रकार नक्षत्रसे पात्रिक नैष्ठिक और साधक
 भाषकका सदाचार है । इस सदाचारके पालन करनेसे उभय
 लोककी मिद्धि हाती है । इतना ही नहीं किन्तु यह सदाचार
 नातिमय दानस राजभयादि रक्षित पूर्ण सुखका सम्य मार्ग है ।

दशलक्षण व्रत विधि

माघ चैत्र और भाद्रा मासमें शुक्ल पयमीसे पूर्णिमा तक
 दश दिन उपवास या आम्ल तप वा एकासनसे यह तप होता
 है । पचामृतका अभिषेक खोयीम भगवानको करना और पूजा
 अर्चा करनी, व्रतमें ब्रह्मचर्यका पालन करना, उत्तम दश धमका
 स्वाध्याय करना त्रिकाल सामायिक करनी भूमि शयन करना
 त्रिकाल जिन भक्ति करनी गुरु शास्त्रकी भी पुजार्चा करनी,
 सुपात्रमें दान करना दिवस रात्रि सद्यधि आलोचना प्रतिक्रमण
 करना जमोकार महामत्रका ध्यान करना, यथाशक्ति मीन धारण
 करना प्रतिदिन व्रतधार जाप जपना यह विधि आराध्य दिनोमें
 निरत्य कर्मकी है । व्रत पूर्ण होते उद्यापन करना ज्ञान दर्शन

चाग्रिकी वस्तुय दश दश मन्दिरजीमें दनी शक्ति नहीं होवे
ता दनामन करना । यह आराधना मोक्षकी सीडी है

जाय नीम्न त्रिव्य मुतायिक करना ।

दश द्वियर्मां दश जायमत्र ।

३३	ह्रीं	अह	मृच्छकमठममुद्गनाय	उत्तमत्रमात्रमागाय	नम ॥१॥
३३	ह्रीं	,	,	उत्तममात्रय धर्मागाय	नम ॥२॥
३३	ह्रीं	,	,	उत्तममात्रय धर्मागाय	नम ॥३॥
३३	ह्रीं	,	,	उत्तममात्रय धर्मागाय	नम ॥४॥
३३	ह्रीं	,	,	उत्तममात्रय धर्मागाय	नम ॥५॥
३३	ह्रीं	,	,	उत्तममात्रय धर्मागाय	नम ॥६॥
३३	ह्रीं	,	,	उत्तममात्रय धर्मागाय	नम ॥७॥
३३	ह्रीं	,	,	उत्तममात्रय धर्मागाय	नम ॥८॥
३३	ह्रीं	,	,	उत्तममात्रय धर्मागाय	नम ॥९॥
३३	ह्रीं	,	,	उत्तममात्रय धर्मागाय	नम ॥१०॥

प्रतिदिन बीस मात्रा गिणनी चाहिये ।

नोट - ज्ञानका उपकरण-रुमाल तथा वा धनकी ताडी शास्त्र
रखनेकी ठरणी उपदेशकी लिये आमन, लगनी
भस्मीपात्रादि १० दश वस्तु तथा दश शास्त्र शास्त्र भंडारमें
या मुनिको तथा एक एक शूलक आर्जिकादिको दना
चाहिये चाग्रिक उपकरण पिच्छिका कमंडल और सुपात्र
याग्य वस्तुय दश दश उपापनमें धरकर पीठे जररी
दाय उत्त व्यक्तिको दनी चाहिये या मन्दिरजीमें
रखनी चाहिये ।

दर्शन उपकरण पूजन ज्ञानकी भय सामग्री हर

घाल करवाही दीपक पात्र, धूप पात्र अलङ्कार अथवादि दश दश
घस्तुय उपापनमें रखकर पछ जगरी घाले मंदिरजामें
पदीचादनी चाहिये

श्री मुनिराजका दान देनेकी विधि

मुनिजीका दान करनेवाला भाषक या धार्मिकको क्षुद्र
(दायित) अन्नपानीका त्यागदाना चाहिये । तथा अष्टगुण युक्त दाना
चाहिये । दान देने योग्य आहार पानोमें नश कलेवर, ककर
सहित वणादि चीजे रहनी नहीं चाहिये । मुनिजीकी नवधा
भक्ति प्राय भ्यतावर दिगवरक भर पड़ पीछकी है सो करनी
न करना यह व्यक्तिकी इच्छानुसार हो । मुनिजीको इनमें
कशाप्रही न रहना चाहिये । अतःवर मुनि ता दाताक लिये
बनाया हुआ आहार (कंदमूल त्रिनाका परिणत हुआ-घेंतालीस
दाप रहित) ले लेते हैं । आर पाच दोष भोजनक भोजन लेते
समय टालत है । दान देने घालको और दान लेने घालेकें
मोक्ष पुत्रवार्थकी भावना रखनी चाहिये । मुनिका लिये दूध दधि
आदि विद्वितियाला आहार त्याग्य है किंतु हीन सघयणों
स्याध्याय समिति आदि पालनक लिये जरूरी हो उतन
विद्वितियाला आहार लेनेमें दोष नहीं है । बाकी समय भावन
ही सदा रहा ॥

अथ देवाधिदेव पूजा ।

दोहा ।

मभु तुम राजा जगतक, हमें दय दु ख मोह ।

तुम पद पूजा करत ह, हमपै कहना होदि ॥९॥

ॐ ह्रीं अष्टादश दोष रहित पद्मवत्वारिशाद् गुणसहित
श्री जिने न्न भगवन् अन्न अघतर अघतर सैषौषद् ।

ॐ ह्रीं अष्टादशश्लोपरहितपञ्चत्वारिंशद्गुणसहितधी
जिनद्र भगवन् अग्रनिष्ठ तिष्ठ ठ ट ।

ॐ ह्रीं अष्टादशश्लोपरहितपञ्चत्वारिंशद्गुणसहितधी
जिनद्र भगवन् अग्र मम सन्निहिता भवभव । वपद् ।

छद् त्रिभंगी ।

बहु मृया सतापो, अति दुःख पायो मुमपै आयो जल ल्याया ।
उत्तम गगाजल, शुचि अति शीतल प्रासुक निमल गुण गाया ॥
प्रभु अंतरजामी त्रिभुवन नामी, सधय स्वामी दाप हरा ।
यद् अरज सुमीजे, टील न वीजे, ग्याय करीजे दया धरो ॥१॥

ॐ ह्रीं अष्टादशश्लोपरहितपञ्चत्वारिंशद्गुणसहितधी
जिनद्र भगवद्भया जग्म मृग्यु जरा विनाशनाय जल निर्वप
यामीती स्वाहा ॥ २ ॥

अपतपत निरंतर, अगति पन्तर भाउर अंतर वेद करयो ।
शै पायना चन्दन दाद निचन्दन, तुम पद धन्दन हरप धर्यो ॥ प्रभु ॥२॥

ॐ ह्रीं अष्टादशश्लोपरहितपञ्चत्वारिंशद्गुणसहित धी
जिनद्र भगवद्भया भवताप नाशाय चन्दन निवप ॥ २ ॥

औगुन दुःखदाता, कष्टो न जान, मोहि अशाता, यहुत करे ।
तदुल गुन मदित अमन् अत्यदित, पूजत पदित, प्रीति धरे ॥ प्रभु ॥३॥

ॐ ह्रीं अष्टादशश्लोपरहितपञ्चत्वारिंशद्गुण सहित धी
जिनद्रयो अभय पद प्राप्तये अभयान् निवप ॥ ३ ॥

सु नर पशुका द्रव काममहाफल, यात करत छल मोहि लिया ।
ताव शरलाऊ भगति घडाऊ ग्याल दिया ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशपरहितपञ्चवारिंशद्गुणसहितधी जिने
भ्य वामघाण विध्यसनाय पुष्य निर्यप० ॥ ४ ॥

सद्य द्वापनमाहो, जामम नाहो, भूय सदा ही मो टाग ।
सद घवर पावर, छाहू घहुत धर, धार कनक भर तुम आगे ॥ प्रभु० ॥ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोपरहितपञ्चवारिंशद्गुणसहितधी
जिनेभ्य क्षुधा राग विनाशाय नैघण निर्यप० ॥ ५ ॥

अद्यान महातम छाय रघो मम, ज्ञान रुक्यो ह्रम दु स पाये
तम मेटनद्वारा तेज अपारा, दीप सँवारा जस गाथ ॥ प्रभु० ॥ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशपरहितपञ्चवारिंशद्गुणसहितधी जिनेभ्यो
मोहान्धकार विनाशनाय दीप निर्यप० ॥ ६ ॥

इह कर्म महाधन भूल रघो जन शिष मारग नहि पायत है ।
पृष्णाणदधूप अमलअरूप, सिद्धरूपदप ५घाघत है ॥ प्रभु० ॥ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोपरहितपञ्चवारिंशद्गुणसहितधी
जिनेभ्याऽऽटकर्म दहनाय धू० निर्यप० ॥ ७ ॥

सबतै जारावर, अतरायअरि, सुफल विघ्न करि डारत है ।
फलपुज विविधभर, नयन मनाहर, भी जिनेघर पद धारत है ॥
प्रभु० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोपरहितपञ्चवारिंशद्गुणसहितधी
जिनेभ्यो माक्षफल प्राप्तये फ० निर्य० ॥ ८ ॥

आठौंदु गदानी, आठ निशानी, तुम दिग आनी चारन हो ।
दीन निस्तारन, अधम उधारन, पातन तारनकारन हो ॥ प्रभु०
॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशशोष रहितपञ्चवारिंशद्गुणसहितश्री-
निनेन्द्र भगवद्भयोजनध्यपद प्राप्ताय अर्थ निवप० ॥९॥

जयमाला

दाहा

गुण अनत को कदि सके छियालीस जिनराय ।
मगट सुगुन गिनती कहू तुम ही दाहू सदाय ॥ १ ॥

चौपड़ (१६ मात्रा)

एक ज्ञान बचल जिनस्वामी दा आगम अध्यात्म नामी ।
तीन काल विधि परगट जानी चार अनत चतुष्टय ज्ञानी ॥२॥
एच परावतन परकासी, छ हाँ दग्धगुनपर जयभासी ।
सात भगवानी परकाशक, आठाँ कर्म महारिपुनाशक ॥३॥
नय तत्त्वक भावन हारे, दशलच्छन साँ भत्रिजन तारे ।
ग्यार प्रतिमाक उपदेशी बारह सभा सुखी अकलेशी ॥४॥
तरह विधि चारितक दाता चौदह मारगनाक ज्ञाता ।
पंद्रह भेद प्रमाद निवारी सालह भावन फल अधिकारी ॥५॥
तारे सत्रह अक भरत भुय, ठारे थान दाता तुष ।
भाय उनीस जु कह प्रथम गुन, थीस अक गणधरनीकी धुन ॥६॥
इकदम सर्वघाति विधि जान, याइस विध नधमै गुण थानै ॥
तेइस निधि अरु रतन नरश्वर, सा पूजै चौथीस जिनेश्वर ॥७॥
नाश पचीस कपाय करी हैं दशघाति छथीस हरी है ।
तत्व दरख सताइस देखे, मति विज्ञान अठाइम पेखे ॥८॥
उनतिम अक मनुष सब जानै, तीस कुलाचल सर्व बखानै ।
इकतिम पल सुधर्म निहारे, उतिम दाप समाइक टारे ॥९॥
नतीम सागर सुखकर आयै, चौतिम भेद अलब्धि घताये ।
पौतिम अच्छर जप सुखदा, छनिसकारन रीति मिटाई ०००

सैतिस भगवादि ग्याह गुनमें, अइतिसपद लडि नरक ॐ पुनमें ।
 उनतालीस उदीरत तरम, घालिस भयन इद्र पूजे नम ॥११
 इकतालीश भेद आराधन, उदे घियालिस तीर्थेश्वर भन ।
 तेतालीस बंध शाता नहि द्वार चयालीस नर चौधे माहि ॥१२
 पैतालीस पल्यक अच्छर छियालीस विन दाप मुनीश्वर ।
 नरक उदे न छियालिस मुनिधुन प्रकृति छियालिस नाश दशम गुः
 ॥१३

छियालीस धन राजु सात भुय, अक छियालिस सरसा कहि कुः
 भेद छियालिस अंतर तपेश्वर, छियालीस पुरन गुन जिनवर ॥१४॥
 अडिल्ल ।

मिथ्या-तपन निधारण चद्र समान हो,
 मोहतिमिर धारनकां कारण भान हो ॥
 काल कपाय मिटावन भेष मुनीश हो,
 'घातन' सम्यक रतन त्रय गुन ईश हो ॥१५॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदापरहितपट्टचत्वारिंशद्गुणसहितधी-
 जिनेन्द्र भगवद्भया पूर्णाऽर्घ्यं निर्वेप० ॥१०॥

(पूर्णाभ्यक वाद विसर्जन करना चाहिये)

इति धी जिनेन्द्र पूजा समाप्त ।



गुरुपूजा

दोहा

बहुं गति दुःखमागर विपै, तारन तरन जिहाज ।

गतन प्रय निधि नगन तन धन्य महा मुनिराज ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यापाध्याय सद्यसाधुगुरुसमूह ! अत्र अघतर
अघतर ! मदीपट ।

ॐ ह्रीं श्री आचार्योपाध्याय सर्व साधुगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ
ठ ठ ।

ॐ ह्रीं श्री आचार्यापा पाय सर्व साधुगुरुसमूह ! अत्र मम मन्नि
हिता भय भय । वपट ।

गीता छंद ।

शुचि नाग निरमल क्षीरदधिमम, सुगुह चरन चढाह्या ।

तिहुं धारतिहुं घरद नर स्वामी अति उछाह बढाह्या ॥

भय भोग तन पैरान धार, निहार शिष तप तपत हैं ।

तिहुं जगतनाथ अराध साधुसु पूज नित गुन जपत हैं ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यापाध्याय सर्व साधु गुरुभ्यो जल निर्वा

पयामोति स्याहा ॥१॥

करपुर चदन मल्लिमी घनी, सुगुरुपद पूजा करी ।

मय पाप ताप मिटाय स्वामी धाम शीतल विस्तरौ भव ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यापाध्याय सर्व साधु गुरुभ्यो भय ताप

यिनाशनाय चदन नि ॥२॥

त दुल कमाद सुषाम उज्जल सुगुरु पगतर धरत हैं ।

गुनवार औगुन हार स्वामी चदना दम करत हैं ॥ भवभौ ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यापाध्याय सर्व साधु गुरुभ्योऽभयपद प्राप्तय

अक्षतान् नि ॥३॥

शुभ वृत्त राम प्रकाश परिमल सु गुरु पावन धरत ही ।
 तिहार मार उवाधि स्वामी, शीलद्विद उरधरत ही ॥भय० ॥४॥
 ॐ ह्रीं श्री आचार्यापाध्याय सर्व साधु गुरुभ्य कामया
 विध्यमनाय पुष्प नि० ॥४॥

पञ्चान मिष्ट मलीन सुदर, सुगुरु पावन प्रीति सौ ।
 कर श्रुधा रोगविनाश स्वामी, सुधिर कीजे रीतिसौ ॥भय० ॥५॥
 ॐ ह्रीं श्री आचा ।पध्याय सर्व साधु गुरुभ्य श्रुधारोग विना
 शनाय नैवे० ॥५॥

दोषक उयात मज्ञात जगमग, सुगुरुपद पूजा मदा ।
 तमनाश ज्ञान उजास स्वामी, मोहि माह न हो कदा ॥भय० ॥६॥
 ॐ ह्रीं श्री आचार्यापाध्याय सर्व साधु गुरुभ्यो माहाधकार विना
 नाय दीप निवया० ॥६॥

बहु अगर आदि सुगंध खेड सुगुण पद पद्महि खरे ।
 दु ख पुंजकाठ जलाय स्वामी गुण अछय विसमें धरे ॥भय० ॥७॥
 ॐ ह्रीं श्री आचार्यापाध्याय सर्व साधु गुरुभ्याऽऽटकर्मद्वनाय
 धूप निवया० ॥७॥

भर धार पूर बहाम बहु विधि सुगुरुकम आगधरो ।
 भगल महाफल करी स्वामी, जोर कर विनती करी ॥भय० ॥८॥
 ॐ ह्रीं श्री आचार्यापा पाय सर्वसाधु गुरुभ्यो मोक्षफल प्राप्तये
 फल निव० ॥८॥

जल गंध अक्षत फल नैवज, दीप धूप फलावती ।
 घातन' सुगुरुपद देहु स्वामी, हमहितार उतावली ॥भय० ॥९॥
 ॐ ह्रीं श्री आचार्यापाध्याय सर्वसाधु गुरुभ्याऽनर्घपद प्राप्तये
 अद्य निर्व० ॥९॥

जयमाला ।

दोहा ।

कनककामिनी विषययश, दीभि मय ममार ।
 त्यागी वैरागी महा, मायु सुगुन भङ्गा ॥१॥
 तीन पापी नय कोट मय, यज्ञो भीम नमाय ।
 गुन तिन अट्टारुन लो कहुँ आरती गाय ॥२॥

छन्द चसरी ।

एक दया पाले मुनिराजा, रागदाप हँ हरन पर ।
 तीना लाक पगट मय देवै, चारौ आराधन निकर ॥
 पंच महाव्रत दुखर धरिँ छहो दस्य जान सुदित ।
 नात भगवानी मन लायि पाँ आठ गिद्ध उचित ॥३॥
 नवा पदारथ विधिनी भागवै, बध दशौ शूरन करन ।
 श्याम शकर जानै मानै, उत्तम धारह व्रत धरन ॥
 तरहभद काटिया शृगे, घोदेह गुन धातक लखिय ।
 महापमाद् पंचदश नाशे, माल कपाय सबै नखिय ॥४॥
 बधादिक मग्रह छतर लख, गरह जाम न मगन मुन ।
 एक समय उनईम परीषट घीस प्रहपतिमें निपुन ॥
 भाष उदीश इकीसा जानै, बाइन अभख त्याग कर ।
 अहिमिंद्र तेइमो बर्दे, इन्द्र सुग चौथीस वर ॥ ॥
 पच्छीसा भाषन नित भायै, छवियस अंग उपग पदे ।
 सत्तारना विषय विनाशे, अट्टाईमा गुण सु बडे ॥६॥
 शीत समय सर चौपथथानी, घोषम गिरिसिर जोग धरै ।
 यथा धृषतरै धिर ठाढ़े आठकरम हनि निरिद्ध बरै ॥६॥

दोहा ।

कहा कहाँ लो भद मी, बुध धारी गुन गुर ।

द्वयराज सेवक हृदय भक्ति भरी भ्रंरपूर ॥७॥

ॐ श्री श्री आचार्योपाध्याय सर्व माधु गुण्ठ्या अर्थ निब ० ।

इति गुरुपूजा समाप्त ॥

सरस्वती पुत्रा ।

दादा ।

जन्म जरा मृत्यु छय करै, हरै कृन्ध जइरीनि ।

भयमागर साल तिरै, पूजै जिन घन प्रीति ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव सरस्वती वाग्वादिनि । अत्र अथतर
अथतर सथोपद् ।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव सरस्वती वाग्वादिनि । अत्र निष्
तिष्ठ ठ ठ ।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव सरस्वती वाग्वादिनि । अत्र मम सति
हिता भय भय थपद् ।

त्रिभगी ।

छीरोदधि गगा, विमल तरगा, मल्लि अमगा, सुख सगा ।

भरि कचन झारी, धार निवारी, तृपा निवारी, दित चंगा ॥

तीर्थकरकी धुनि गणधरने सुनि, अग रच धुनि हान मई ।

सा जिन यखानी, शिवसुखदानी त्रिभुवन मानो पूज्य भई ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै जल निषपामीति
स्वाहा ॥ १ ॥

(शास्त्रजीक सामने शुद्ध जल पक कटोरीमेंस दूसरी घाटकीमें
धमकीस डालना सा जल पूजा)

करपूर मगाया चन्दन आया, कसर लाया रंग मरी ।

शारद पद्मदो, मन अभिनदो, पापनिर्दो शङ्क इरी ॥ तीर्थ० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै निषपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

सुखदास क मोद धारक मोद अति अनुमोद चद्रसम ।

बहुभक्ति यद्गाइ कीरति गाइ, श्राहु सदाइ मात मम ॥ तीर्थ० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै अक्षयान् निषपामि ॥ ३ ॥

(पह विधि-स्नानादिते पवित्र होकर, घेदिकापर शास्त्रा
रखकर इनक सामने करणी चाहिये। अष्ट प्रकार पूजनक
द्रव्य पवित्र होना चाहिये। यह नोध सव पूजन में जानी जाय)
पीछे जयमाला गूढे होकर या चेटे चेटे पढ़ी जाय

जयमाला ।

मोरटा ।

अकार धुनिसार द्वादशाग घाणी विमल ।
नमो भक्ति उर धार, ज्ञान करे जड़ता हरे ॥

उसरी ।

पहला आचाराग सखानी, पद अष्टादश सहस्र प्रमानी ।
दूजा सूत्रकृत अभिलाष पद छतीस सहस्र गुरु भाष ॥१॥
तीजा दाना अग सुज्ञान सहस्र वियालीस पद सरधान ।
चोथा नमवादाग निहार, चौसठ सहस्र लाख इक धार ॥२॥
पंचम व्याख्या प्रगपति दरश, दीय लाख अष्टादश सहस्र ।
छठ्ठा शानुकथा विसतार, पांच (लाख) छापन हजार ॥३॥
सप्तम उपासकाध्ययनग, सत्तर सहस्र ग्यार लाख भग ।
अष्टम अंतकृत दम इम, सहस्र अष्टादश लाख तइम ॥४॥
नवम अनुत्तरदश सुविशाल, लाख यानये महम चषाद ।
दशम प्रश्न व्याकरण विचार, लाख तिरायन सोल हजार ॥५॥
ग्यारम सूत्रत्रिधाक सुभाष, पक्ष पाड़ चौरासी लाख ।
चार काडि अरु पंद्रह लाख, द्वा हजार सव पद गुरुशाख ॥६॥
द्वादश दृष्टिवाद पन भेद, इकमी आठ कोडि पन घेद ।
अदमठ लाख सहस्र छापन है, सठित पचपद मिथ्या दन है ॥७॥
इत्रमी चारह काडि पमाना, लाख तिरामी ऊपर जानी ।
टापन सहस्र पंच अधिकाने, द्वादश अग सव पद मान ॥८॥

१३। इशपत आठ हो लाग्य, महम चुरासी छहमो भाग्य ।
 १४। इकीम शिष्णक घतार, पक पक पत्रके बे माये ॥९॥

धता

१। कनोक ज्ञानमें, सुई लोय अलाक ।
 धानक ' जग जयवत हा महा देत हा धोद ॥१॥
 २। श्री श्री जिनमुखाद्वय मरस्वत्ये देख्ये महापर्व नियपा० ॥९॥
 इति मरस्वती पूजा ।

५

५ नायूराम प्रेमी श्रुत ।
 विसर्जन विधि ।

दाढा

विन जान या जानके रही दूट जा कोय ।
 गुम प्रमादने परमगुरु सो मय पुरत होय ॥९॥
 पूजन विधि जाना नहीं, नहि जाना आह्वान ।
 ओर विसर्जन हु नहीं क्षमा करा भगवान ॥२॥
 मय हीन धन हीन हु, मिया हीन जिन देख ।
 क्षमा करहु राजहु मुझे दहु धरणकी लय ॥३॥
 भाय जा जो दूषण, पूजे भक्ति प्रमान ।
 मा भव काव हु नृपावर, अपन अपने धान ॥४॥

॥ श्री ॥

॥ सामायिक करनकी विधि ॥

गृहस्थक निग्यकर्म छ है, १ देखपूजा २ गुहकी भक्ति,
 ३ स्थाप्याय, ४ मेयम २ तप, ६ दान करना सामायिक करना
 इन ६७ कर्मोंमें तप अन्तरंगत है इसी द्विय मरग्यक गृहस्थकी
 धर्मदिन मयरही पकथार धूमरी प्रतिमाधारिका मयेदे व श्याम
 दया व तासरी सामायिक प्रतिमाधारीका सुवह दुपहर, व श्याम

इस प्रकार कमसे कम ३ घार सामायिक करना चाहिये। उपग्रहण व उपवासत्रं पुर्य (पहिले) दिन इससे ज्यादा समय तक सामायिक करना चाहिये। सामायिकका काल (टाईम) निम्न प्रकार है। जघ-यकाल-दो घड़ी अर्थात् एक मुहुर्त। ४८ (मिनिट) का है। मध्यमकाठ ४ घड़ी व दो मुहुर्त (१ घण्टा ३६ मिनिटका है) उत्तकण्ट काल-छ घड़ी व ३ मुहुर्त (२ घण्टा २४ मिनिठ) का है।

नोट - जो प्रतिमाधारी नहीं है (धती) है उनकलिये तम यकी कोइ मर्यादा नहीं है वा अपने अवकास (समय) क अनुसार कम ज्यादा भी करसकते हैं।

सामायिक करनेका उत्तम-काल मघरेका है स घरे ४ घजे व सूर्यादयसे पहिले सया (धस्तर) से उठकः ही करना चाहिये। गृहस्थ यदि स्त्री महवास आदिस अपवि होतो हाथपाव धोकर व कपड़े बदलकर घरक किभी मकाम स्थान (जहाकि हाम मन्धर आदिकी) कोइ बाधा नहीं है। अथर जिन मदिर्जी व धमशाळामें उत्तर व पूर्य तर्फ मुल कर कुशास (चगाइ) सादरी आदिपर बैठकर सा सामायिक धारण कर चाहिय। तथा मदिर्जीमें दिशाका कोइ नियम नहीं है। कार मदिर् नये देयामसे एक दूध है व उसक सामन बैठकर साम यिक करना सर्वात्म है। इसलिये यहा जहा किसी प्रकारक अङ्घन नहीं हा बेनी जगह किदरभी मुह करक सामायि करनेका बैठ सकते है।

सामायिक करनेवाला पहिलेकी दुभांसना (चगाइ) प सीधे खड़े होकर पावक अग्रभाग क अगुलका अतर रखकर सरिखे दोनो हाथ लटका देय (नीच करदेय) द्रष्टिनासाक अग्रभागपर रखकर खड़ा होये। अपने मनमें प्रतिज्ञा करे कि मे इतने समयतक

सामायिक करूंगा मा जगतक सामायिक प्रिया करू तवतक मुझे इस स्थानर मिधाय अय स्थान य समस्थ प्रकारक परि प्रवृत्ता मयथा त्याग हैं । फिर नमन ३ धार नमस्कार (गर्भाकार) मयथा उच्चारण करत माष्टाक नमस्कार कर । फिर खड़कोकर व धन्कर ३ धार नमस्कार मय पढ़ हाथ जोड़कर जुड़े हुये हाथोस तीन आवत (चक्र) दकर जुड़े हुये हाथोपर मस्तक रखकर शिरानति कर । इसका मतलब यह है कि मैं मन ध्यान धायन सामनेकी दिशा तरफक जितने कृशिम-अकृशिम व वायव्य (जिनमदिग्ध सिद्धयत्र) वगैरह है उनसयीका नमस्कार करता हू । इसी प्रकार आधर्त य शिरानति दाहिने हाथ पर समत हर क्रमसे करते हुये कि सामने आजाय । यदि मदिग्गीमें घेठकर सामायिकका काम पढे तो चारो तरफ हुमेरभार सामायिक व स्वाध्याय आदि करत तब उनको पीठ लगती हाता जिस तरफ मुख करके घेठ नी उनी तरफ ४ आधर्त ४ शिरानति गिब परंतु मनम धारणा (भाव दिशा अंक अलग रख कि समस्त दिशाक समस्त चेत्याग्यो आदिको नमस्कार करता हू । अथवा हाथोका पहले आधर्तक याद पक वार दाहिन हाथकी तरफ झुकाकर फिर पीठ नमस्कार करत समय माथपर हाथ रखकर व चाथीदार घाहितरक हाथ झुकाकर मुखा हाथोपर मस्तक रखकर शिरानति कर ।

इस प्रकार चारतरफ धारव रमें १२ आधर्तव ४ शिरानति करनर पछान पहिल जिनतरफ मुह करत घेठे हाथ जाडे हा उनी तरफ मुखमात व पश्चासनने घेठकर शान चित होकर सामायिकका पाठ धीर २ पढे जवानी याद न होता पुस्तक सामने, रखकर अथका समक्षता हुया पढे ॥

सामायिकपाठमे प्रतिक्रमण प्रत्याख्यान, सामायिक स्तथन

बद्धन य कायोत्सर्ग य छु कर्म है । प्रतिक्रमणम भगवान्
 नामने अपन किये हुए पाप कार्याका स्मरण करे छ आगेचन
 (प्राथना) करना है । प्रत्याख्यानकर्ममें य पश्चात्प मने प्रमाद
 यशाभूत हाकर किये है ना मैं आपर पाम अपनी निन्द
 करके प्राथना करता हू कि मग यह दाय मिथ्या होय । साम
 यिक कर्ममें समस्त जीवामें य उत्तम मध्यम समस्त पदार्थों
 गग द्वेष छाड़कर समस्त जीवास किय अपने अपराधाकी क्षम
 मागकर समता भाव रखनकी प्रतिज्ञा है बोधे स्तयन कर्म
 २४ तीर्थकरोका नमस्कार पृथक् स्तुति (गुण प्रशंसा) करता हू
 पान्दरे बद्धना कर्ममें अतिम तीर्थकर भगवान् महावीर स्याभीका
 प्रशंसा पृथक् धारधार नमस्कार करता हू । सो पाठ करते
 मप्रथ इन पावा परमाठीकी मूर्तिका नमस्कार करना चाहिये ।
 और छूटा कायोत्सर्ग है ना पहलेशी तरह खडे होकर शरीरसे
 समता छाकर चारो दिशाओमें ३-३-आवर्त य १-१-शिरोन
 ति करे । इस प्रकार आदि य अन्तम ४ आवर्त य चार शिरो
 नति करनसे सबसे थोड़े समयकी सामायिक करना सो पूरा
 होजाता है । परन्तु इसमें थोड़ाही समय लगा है इसलिये
 ज्यादा समय शातभाव रखनके लिये इन समता तप भावोंमें
 ही १-२ णमोकार मंत्रकी माला करलेना चाहिये । इसमें सिवाय
 सामायिक सुद करनसे पहले आराधना पाठ जो प्रतिक्रमण
 ही है उस पढ़लेना चाहिये । नमस्कार मंत्रकी माला
 करनमें ज्यादा समय लगता होतो अथवा अ याय पाठ
 पढ़न दातो ३२ अक्षरी नमस्कार मंत्रकी जगद 'अरहत सिद्ध'
 ६ 'अमि आउसा' ५ 'अरहत' ४ 'सिद्ध २ 'ॐ १ इनमें समया
 नुसार वाहभी जाय पढ़कर सामायिक कार्य पूर्ण करना
 चाहिये । इस प्रकार निय १ बार २ बार य ३ तीन बार

रायें। मधु माम मघ चितधाहे ॥ नहिं अत्तल गुणधारी । मये
 वृषिसन दुग्दारी ॥ १० ॥ दुइथीम अभय जिनगाये । सो भी
 निशदिन भुजाय ॥ कद्दु भग्नाभद्र न पाया । उर्वा त्योकरि उदर
 भराया ॥ ११ ॥ अनतानु जु यधो जावा । प्र यागान अपत्या-
 ह्याता ॥ मच्चलन चीकरी गुनिय । मय भद्र जु पाडश मुनिये
 ॥ १२ ॥ परिहान अगतिरति शाग । भय म्यानि तिवेइ मजोग ॥
 पतवीम जु भद्र भये इम । इनक यश पार किये हम । १३ ।
 विद्रावग शयन कराइ । सुपनेमधिशाप लगाइ । फिर जागी
 जिपयवन धाया । नानाविध विषफट गाया १४ ॥ किये उडार
 निहागविहाग । इतम नहिं ततम विजारा ॥ विन देखो धरी
 उटाइ । विन शाधी यम्नु जु खाइ ॥ १५ ॥ तव ही परमाइ
 सताया । बहुविधि विकल्प उपजायो ॥ कुट्टु सुधियुधि नाहि
 रही है । मिथ्यामति छाय गयो है ॥ १६ ॥ मरजादा सुमदिग
 लीनी । ताइमें दाप जु कीनी ॥ भिन भिन अय कसैं कदाये ।
 नुम ज्ञानधिपैं सय पइये ॥ १७ ॥ हा हा । मैं दुठ अपराधी ।
 प्रनजीवनराशि विराधी ॥ थाउरकी जतन न कीनी । उरमें
 करुना नहिं लीनी ॥ १८ ॥ प्रथिवी बहु खोद कराई । महलादिक
 जागा चिनाई ॥ पुनि विनमाल्यो जल दोल्या परात पवन
 विलाल्या ॥ १९ ॥ हा हा । मैं अदयाचारी । बहु दमितकाय जु
 विदारी ॥ तामधि जीवनक खदा । हम छाय धरि आनदा
 ॥ २० ॥ हा हा । परमाइ बसाई । विन देख अगनि जलाई ॥
 तामधि जे जीव जु आये । ते ह परलाक सिधाये ॥ २१ ॥
 योध्यो अनराति पितायो । इधन विन शाधि जलायो ॥ झाडु
 ले जागा खुलागी । चिबटी आदिक जीव विदारी ॥ २२ ॥ जल
 छाना जिधानो कीनी । सो ह पुनि डारि जु कीनी ॥ नहिं
 जलथानक पहुँचाइ । किरिया विन पाप उपाइ ॥ २३ ॥ जल मळ

धारित गिरिवाया । वृत्तिकुल बहु घात करायो ॥ नदियन विष
 खीर धुवाय । वामनके जीव मराये ॥ २४ ॥ अत्रादिक शाप
 करा । तामें जु जीव निमराइ ॥ तिनका नहीं जतन कराया ।
 गमियाँ धूप कराया ॥ २५ ॥ पुनि द्रव्य शमापर वाप्त । घट्टु
 भारेंभ हिमा माज ॥ वीय तिमनायश भारी । कदना नहि रंघ
 विचारी ॥ २६ ॥ ताका जु उदय अथ आया । नानाविध माहि
 मताया ॥ पण भुंजत जियदु ख पाये यथते केंस करि गार्य ॥ २७ ॥
 मुमजानत कवलशानी । दु ख दूर करा शिषधानी ॥ दम ता मुम
 शरण लही है । जिन तारनविरद सहो है ॥ २८ ॥ जो मायपती
 इव हाये । सो भी दुखिया दुख गौर्ये ॥ मुम तीन भुवनक
 स्वामी । दु ख मटहु अंतरजामी ॥ २९ ॥ द्रापदिका खीर यटायो ।
 सोताप्रति कमल रथाया ॥ अजनसे किये अजामी । दु ख मटयो
 अंतरजामी ॥ ३० ॥ मर अथगुन न गितारा । प्रभु अपना विरद
 सट्टारो ॥ मय दापरदित करि स्वामी । दु ख मटहु अंतरजामी
 ॥ ३१ ॥ इद्रादिक पदवी न चाह । विषयनिमें माहि लुभाऊ ॥
 रागादिक दाप हरि अ । परमात्म निजपद दीज ॥ ३२ ॥
 दाहा—दापरदित जिनदुखजी निजपद दीज्या सोय । सय
 भीवनक सुख यदें आनंद मगळ हाय ॥ अनुभव माणिक पारलो,
 'सौंदरी' आप जिनद । य ही घर माहि दीजिय चरनशरन
 आनद ॥ इति ॥

उपदेशक-भक्ष्य विभूति

मपादक मुनि चम्पकनागरजी म

समय की गति

हमारा प्रत्येक पग इनशान भूमि की ओर जा रहा है
 प्रत्येक क्षण में आयु कम हो रही है मृत्यु निश्चय हो रही
 है और प्रतिक्षण शक्ति क्षीण होनी जा रही है फिर भी हम

समझते हैं कि हम बढ़ रहे हैं। जब कोई व्यक्ति किसी २२ वर्ष के युवक से पूछता है कि भाई! तुम कितने बड़े हो? तो हमके उत्तरमें यह बड़े नहीं कहता कि मैं २२ वर्ष छोटा हो गया हूँ क्योंकि मरी आयु २२ वर्ष कम हो गये हैं। यह तो ऐसा ही समझना और कहना है कि मैं २२ वर्ष का हूँ। लाख प्रचलित ऐसी समझ और ऐसा उत्तर कितना गलत है इसकी प्रत्येक बुद्धिमान समझ सकता है।

लोग समझते हैं कि 'समय धीतता है।' यं यह नहीं समझते कि समय तो गतिमान द्रव्य है, घटनाएँ उमकी गति क्रिया न कभी रुकी और न कभी रुकी इसलिये यह क्या धीतता है, धीतता तो हम हैं। कभी माता के गर्भ-में थे कभी पेटसे बाहर आये कभी शिशु थे कभी किशोर हुए और कभी युवक आदि, हमारी काह भी दशा कायम नहीं रही फिर भी हम अपनी दशा का न देखकर समय का ही धीतन बाला समझ लेते हैं।

मठहरि ने कितना सुन्दर कहा है —

भाग न भुक्ता अयमथ मुक्ता तथा न तप्त यय मेय तथा ।
कालो न यातो अयमथ याता, तृष्णा न जीर्णा अयमथ जीर्णा ॥१॥

अर्थात्— हमने भाग नहीं भोग बल्कि भागान ही हमका भाग लिया, (विषय भागा में मनुष्यका बल धीर्य क्षीण हो जाता है)। तप हमने नहीं तपे कि तु तपा न हमको तपा दिया। दूखा जाता है कि मनुष्य तपस्या का बाहरी रूप लेकर अपन कषाय शांत करने के प्रजाय उनका उद्य कर लेते हैं जिससे जन साधारण की अपेक्षा उनमें पाप मान की मात्रा अधिक होख पड़ती है। काल नहीं धीता, हम ही धीत गये, सा टीक ही

रहा है कि काठ की गतिता बही घट रही है। यह ता कभी नष्ट नहीं हुआ किन्तु मनुष्य की आयु काया नष्ट हो रही है। तथा हमारी तृणा जोण नहीं जाती-नहीं गलती हम हो जीर्ण हो रहें हैं। प्रत्यक्ष दीक्षा है कि घृष्टा अथवा मं शरीर ता जीर्ण हो जाता है पर तु मनुष्य य द्वार पर पहुँच हुए घुड़ते वाश का मोह लाभ पहले स भी अधिक तीव्र हो जाता है, माना यह मार सत्कारका धन और पुत्र आदि का अपन साथ ही ले जायगा।

इस तरह भ्रतहरिन इस श्लोकमें मनुष्य जीविका रक्ष्य और मर्म खालकर रख दिया है।

मनुष्य अपन अमर आत्माका महत्त्व भूलकर जिस भौतिक शरीर पर माहित हो रहें हैं उमा विषय में आचार्य वादीभक्तिहन संक्षेपमें कह दिया है कि -

जलधुद धुद नित्यस्य धिगीया नहि तल्पये ।

अथात्- पानीका बबूला जितनी देर ठहरा रह उतनी देर का आश्चर्य करना चाहिये उनका नष्ट होना कुछ आश्चर्य नहीं है। यह भौतिक शरीर जल व बबूल का समान है जब भी यह नष्ट हो जाय उसमें क्या आश्चर्य की बात है।

एग कहत है कि अभि हमारी उम नहीं, कुछ का पील, मीज शाक करले संसारक विषय भागले, कुछ रंग-रलिषी करले, बह हो जान पर त्याग करहेंग, धर्म करलेंग, दीया प्रहण करेंग। ' किन्तु उन्हे सय कुछ दग्धते हुये भी यह विश्वास कैस हो गया कि धर्म करनक लिये व जिस घृष्ट अथवाका सोच रहें हैं, उन घृष्ट अथवा तक य पहुँच

पोवेंगे भी ? हम देखते हैं कि पिता बेठा रहता है पुत्र मृत्युका शिकार हो जाता है ! भारतवाभियोंको औसत आयु ३२ वर्ष की रह गई है तब धर्म करनेके लिये वृद्ध अवस्थाकी बात साचकर विषय भागा में ही समय नष्ट करना भारी भूल है ।

मृत्युका निश्चित समय किसीको मादूम नहीं बलवान जवान आदमी भी बैठे बैठे परलोककी कृप कर जाते हैं गभमें ही बहुतसे मरजाते हैं बच्चाकी मृत्यु-मर्या युवक मनुष्यासे अधिक है और प्राय वृद्ध मनुष्या की अपेक्षा आजकल क युवक अधिक मर्या में मौत क मेहमान बनते हैं । तब आत्मकल्याणके लिये वृद्ध अवस्थाकी बात साजना अज्ञानता है ।

राम लक्ष्मण क प्रेम की परीक्षा लेन क लिये एक देवन कपट वेपमें लक्ष्मणका झूठ-मुठ यह कह दिया क राम की मृत्यु हो गई है ! इतना सुनते ही महान् ब्रह्मान् नारायण पदधारक लक्ष्मणका हाटफेल हो गया । महाबली शरीर नारायण कृष्णका शक्तिशाली (शरीर) जत्कुमार क एक ही क्षणमें समाप्त हो गया । ऐसी ऐतिहासिक घटनाओं को जानते हुये भी हम कह डालते हैं कि अभिखा पीले, युदापमें आत्मकल्याण कर लेंग ।'

मनुष्य जिस सम्पत्तिके लिये मूल्यवान जीवन्तकी मात्ती लगा रहे है जिस धन क नशमें उसे कार्य अकार्य, अर्थ अनर्थ नजर नहीं आता थोड़ी सम्पत्ति पाकर भी अभिमानमें खूर होकर पैर जमीनपर नहीं रखता अपने सामन दुमराको कुछ नहीं समजता दुमराका अपमान करते हीन दुयलकी सताते हुये सकोच नहीं करता, और पता नहीं क्या उद करण ताने याने तानता रहता है इम धनकी दालन तो शरीर से भी अधिक गई घीती है ।

प्राचीन घटनाओं पर शायद कोई विश्वास न करे किन्तु हम ४०-२० वर्ष के भीतर हम भौतिक सम्पत्तिन वितन पलट खाये है यह तो मय किमीका माटूम है । १३००-१४०० वर्ष पुरान चीन के राजा शची हम के भारत की ओर जमनीक रेसर की राज सम्पत्ति हिम तरह उमके हाथमे छिन गई भारत वर्ष के सम्पत्ति शाही निजाम ओर राज महाराजोंकी सम्पत्ति छिनत वितनी दूर गयी ? पाकिस्तान घतन पर पञ्जाब निम्ध के घनिक हिन्दू एकत्रम दुरिद्र हा गये जमोदार और जागीरदारोंकी सम्पत्ति किस तरह कूब कर गई उमका तो हम मयन अच्छी तरह दूरा है फिर भी हम घतका अभिमान करे वितनी भूल है ।

कथित हम धिययमें बतलाया है-

विपुञ्चय कि धन यौवनायुर्दान पर कि च सुगायदत्तम् ।
 कण्ठङ्गनैरप्यंसुभित कार्य कि हि धियय मलिन शबारा ॥१॥
अथान्- वित्तलीही समक का तरह चयन क्या है ? धन, यौवन और आयु ।दान क्या है ? सुगायका दिया गया भाव दयकतानुसार प्रथ्य । प्राण जान हुय भी क्या न करना चाहिये ? पाप कार्य और प्राण बटगत हात हुय भी क्या करत रहना चाहिये ? भगवान की पूजा ।

ऐस चयन धनका न ता विश्वास करना चाहिये और न कुछ अभिमान ही करना चाहिये ।

मनुष्य का अपन आयु के प्रत्येक क्षणका तथा अपनी सम्पत्तिक प्रत्येक क्षणका मनुष्ययाग करना चाहिये आत्मबन्ध्याण तथा परकल्याणका कार्य करणमें जरा भी शिथिल न करना चाहिये । किन्तु देखा यह जाता है कि प्रियय भागीक विपैल साक स बिरलाही मनुष्य बच पाता है ।

एक राजाने अपने महल के बाहर बहुत सुंदर बाग बनवाया और उस बागमें मनुष्यों के मर्कट तुलानेवाली सभी भोग उपयोगकी सामग्रियां मंत्रय किया। सुंदर पुष्पाढी, मनोहर जलक्रीडायां सामान, आगम करने के विचित्र पलंग, आसन, नृत्य गानकी मनमोहक योजना, श्वाश्रित्य गाय पक्षियों का प्रशस्त आदि पाचो हृदययोका अपनी और आकर्षित करनेवाली सभी सामग्रियां जुटा दी।

फिर मनुष्याकी कत व-परायणताकी जात्र करने के लिये उस राजाने घाषणाकी कि दा बटन समयमें जो मनुष्य मयसे पल्ल मुहसे भेंट कर लेगा उसका अपना राज्य पारितोषिकमें दे दूंगा।

राजाकी घाषण सुनकर अनेक मनुष्य राजभयनकी ओर घुट पड़े कि तु जय ये उस बागमें पहुंच तब घाषणाकी बात भूलकर कोई नतकीका नृत्य देखनेमें कोई सुरीले गायन सुननेमें, कोई जलक्रीडामें मग्न हो गया, उन्होंने साधा कि थोड़ी देर पाछे राजाने मिठ लेगा। यद्यपि एक ही बुद्धिमान मनुष्य उस बागके माया मोहमें न फसा और धागका पार करता हुआ सीधा राजाके पास जा पहुँचा।

राजाने उसकी कर्तव्य-तत्परताका अच्छा सम्मान किया और उसे अपना राज्य दे दिया बागके विषय भोगोंमें प्रसक्त ये मनुष्य दो घण्टेमें भी सज्जन न हो पाये तब राजकर्मचारियोंने उन्हें बंधक लेकर-बागसे बाहर निष्काट दिया।

ऐसी ही दशारागी भोगी मनुष्योंकी हेय विषयभागोंमें फंसकर आत्म हिनकी यानी धर्म साधनकी बात भूल जात हैं,

आयु कर्म जय धकय दकर उ ह इम मानय शरीरस निवाल
-ाहर करता है तय उ पछतात हैं ।

धन परिग्रहय सप्रश्मे उ इतन त मय हाजात हैं कि
अपन आम्नाका लन करनकी आर उनका ध्यान ही नहीं जाता।

शठजोका फिर थी एव पक उ दश दश कीजिय ।

भीत आ पहुँची कि हजरत जान यापिम कीजिय ॥

सिनेमा इम युगका एक नया घिरेला साधन है सिनेमा
क चलचित्र पेस घुरे दगस तैयार किय जात है कि उनका
दखनेवात्र पुरुष हिमा चारी यभितार बिना तिल्याये सीख
जात है स्थिरयाँ निम्ज पहनना आडना तथा ध्रुगार कग्ना
सोख जाती है जिन वन्चाका अपना प्रगति शीलगुणो सटावागी
जोपन घनानकी शिखा मिटी चाडिय उ हे सिनेमा उद्द-
रडता, गुरुडागदी कामशामनाओ ओर ही अधिकता प्रेरणा देता
है । लागका आकर्षित करनक त्रिय अभिनयियाँक निलज्ज
हाय-भाय भरे चित्र आम मडुका पर सिनेमा-मालिक दिखलाते
फिरत है । जिनका परिणाम यह हाता ह कि जिन लागोका
पटभर भोजन नहीं भित्ता पेस गरीय बेकारतांग भी सिनेमा
दखनेय लिय अथश्य जा पहुचत है ।

इम तरह भारतो आर्य सभ्यता इम युगमें निर्भङ्गता
कामुक्तता निश्यता आदि दूपिन प्रभाशत मलिन हाति जा
रही है और स्त्री पुरुषाँका भोगाना जोवर भो धर्मशामनान
याँही होता जा रहा है । जो व्यक्ति अपन घरमें मडावार
मुरक्षित रखता चाहत है उतवा अपन परिवारमें
ध्यमन नहँ आन देता चाहिये ।

शुभन्व्य शीघ्रम

अपनी आयु और शरीर अस्थिर नद्वय और कुछ दिनों का अतिथि समझकर इस घाटे में समयमें भी अपने शरीरमें, मनके अन्त विचारोंमें तथा मीठ वचनोंमें एक पाप हुये धनसे जनताका यथा सम्भव उपकार करना चाहिये, दीन दरिद्र दुःखी लोगोंके कष्ट दूर करने चाहिए। पगापकार करनेवाला व्यक्ति शुभ कर्म मन्त्रय करके अपना उपकार भी साथ ही साथ करता जाता है। इसलिये महा माते जागत धुरे कार्योंसे घबो और अन्त कार्य करनेमें जगभी दूर न कर पता नहीं फिर तुम कर महा या न कर सका।

शुद्धा के दो रूप

समरमें जीव अनेक प्रकारकी आकुलताओंसे दुःखी है अनेक तरहकी विताओंसे सदा चिन्तित रहता है अनेक प्रकारके भय इनका भीरु घाय रहत हैं भूल व्यासकी याथा इसकी सताती रहती है और ज म मरणकी व्याधि इसका कभी पीछा नहीं छोड़ती। जैसे ज मस अध मनुष्यका किनी ऊपट खावट भूमिमें चलना पड़े तो उसे पग पर टाकरे पड़ती हैं उसी तरह इन आत्म ज्ञानसे शुभ्य ससारी जीवका मोहके गहन अधकारमें तरक पशु आदि विविध योनियोंमें भटकना पड़ता है। जिस तरह कोलहूका चलानेवाला घेल दिन भरमें २० मील चल लता है किन्तु रहता वहींका वहीं है वह से १० गज भी भाग नहीं पढ़ पाता, उसी तरह ससारी जीव असह्य योजनोंकी यात्रा कर चुका है परन्तु ससारक वयसे छूट नहीं पाया, वहींका वहीं बड़ा है।

जस होइ अन्धा मनुष्य मीला लम्बे चौड़े परशोटमें

भङ्ग रहा है जिसमें कि यथल पकड़ी द्वार वगैर निकलनेका
 पना हुआ है यह धेचारा अ धा दीयालय सहार हाथोस टटो
 रता हुआ उस परकाटका चक्कर लगता है चक्कर लगात लगाते
 जब यह द्वार आता है तब दुभाग्यस उनको कभी खुजली
 हा उठनी है जिसका रुजानक लिय चलना हुआ ज्या ही हाथ
 उठाना है कि यह द्वार निकलजाता है फिर सारा वक्कर
 पगाना पड़ता है कभी उभी द्वारक आनपर छातीमें पीड़ा हाने
 लगती है तब टटोलनेवाला हाथ छाती पर जा लगता है समीप
 भाया हुआ द्वार छूटजाता है, फिर उस साग चक्कर लगाना
 पड़ता है। जब घूमते २ सौभाग्यसे द्वार पुन पानम आता है तब
 दुर्भाग्यसे उनको धाती खुलन लगती है चलत २ उर्वाही टग
 रनेवाले हाथसे धातीको सम्भारता है कि द्वार फिर निकल
 जाता है इसी तरह जन्मभर चक्कर लगात २ धेचारा उस
 परकाटसे बाहर नहीं हो पाता। इसी तरह ममारी जीवको
 बन्दीगृह (जेल) में चक्कर लगाते २ एक मनुष्य भव पेसा
 मिलता है जिसक द्वारसे यह ससारक बन्दी घरस बाहर निकल
 सकता है किन्तु उस समय घर परिवार मित्र परिकर धन
 सचयक माहमें आकर अपना समय बिता देता है मनुष्यभव
 गया कि ससार जेलस निकलनेका द्वार भी जीवक हाथ निकल
 गया। जब कभी सौभाग्यस मनुष्यका शरीर मिला तब फिर
 पुत्र मोह शत्रु द्वेष कन्याक जीवनको चिन्ता दरिद्रतासे युद्ध
 आदिमें फनकर उस सुवण अवसरसे लाभ नहीं ले पाता।

इस सामारिक भ्रमणका मूल कारण राग-मोह है। मोहमें
 मोहित हाका हम जीवका त्रियक अकमण्य हाजाता है, यिकक
 जब कुछ कार्य नहीं करता है तब अत्रियकसे यह जीव अपने
 आपका नहीं पहचान पाता जइ शरीरका ही आत्मा-संभ्रम

बैठता है। यदि भी कार्य, यह चाह लीविक हा, अलाविक हो थड़ा ज्ञान आचरण क यत्र पर सिद्ध हाता है। विमी रागीका यदि रागम न्युत्कारा पाता है ता उमे येश तथा औपधि पर दुदु ब्रह्मा हानी चाहियेकि 'इमम द्वारि में नीराग हा जाडिंग उसे औपधि म्थरका ज्ञान हाना चाहिय ' कि अमुक औपधि पीने क लिये है और अमुक औपधि मालिमर लिये है और इमीक साथ औपधि भी सेवन करना आवश्यक है, इन तीनों प्रक्रियाओंस रागी रोग मुक्त हो जाता है।

समार-भ्रमण या ज म मृत्युके रागसे मुक्ति पानके लिये भी जीवका इमी प्रक्रियाका टीव ताहम अपमाना पद्धता है। ज्ञान और आचरण पर लगाव लगानवागी थड़ा है, थड़ाके अनुसार ही ज्ञान आचरण स्वय चल पड़त है। विमी मनुष्य के हृदयमें यह थड़ा-विश्रान भरकर जाय कि दूध मुझे हानि करता है तो दूध के त्रिषयम उमकी विराधी विचारधारा चल पड़ेगी, यह प्रत्येक तरहस दूधको दु म्बदायक विचारन गगा और लावा यत्न करनपर भी यह दूधका पीना स्वीकार न करेगा।

इसी तरह हमारी जीवकी थड़ा अपन शरीर पर जमी दुर है, उस विश्रान है कि दह अपनी ही एक चीज है पराह नहीं है। सुख दु ख दर्प शाक लाभ, हानि मुझे शरीरसे ही प्राप्त हाती है, पण भण भी शरीर विना में कुछ नहीं कर शकता अत शरीर रूप ही म ह। येना दूद थड़ा समारी जीवकी अपन शरीरके साथ है। इमी थड़ा के अनुसार उमका ज्ञान उन व्यक्तियोंको अपना मित्र मानकर भ्रमसता है जा इमके शरीरका कुछ लाभ पहुँचाते है। और जिन प्राणियोंसे इसके शरीरको रक्षमात्र भी क्षति पहुँचती है उनको अपना इष्ट

समझ लेता है। जिन वस्तुओंमें शरीरको कुछ लाभ अनुभव होता है उनको प्रिय, और जिन चीजोंसे इस अपने शरीरकी शक्ति जान पड़तीहै उन्हे अप्रिय समझ लेताहै। अपनी उन्ही वस्तुओंको अनुसार समझ हुअे मिश्रिते प्रेम करता है और शत्रु गन हुए लोगोंमें वैग पाधकर उनसे लड़ता झगड़ता है। प्रिय वस्तुओंका समझ करता है, अप्रिय वस्तुओंका दूर दटा देता है। गड़ फड़ डालता है।

इसी प्रेम धर के आधार पर जीव समारके सभी कार्य किया करता है। इस कारण समारका मूल शरीरमें आत्माकी मझा ही है। यह मझा सत्य मझा नहीं है क्या कि शरीर का एक तरह समारी जीवका कुछ दरतक किगये पर लिया हुआ एक घर है। नियत समयके बाद यह किरायेका मकान तीवका नियमसे खाली करना पड़ता है। इस दशामे यह शरीर जीवका अपना पदार्थ किस तरह बन सकता है अतः शरीरमें आत्माकी मझाका मझा 'न कहकर कुमझा या मिथ्या मझान कहना चाहिये। इससे यह बात सिद्ध होती है कि समारी जीवका समारकी जेलम रखनेवाग काई और नहीं है, इसीके हृदयमें जमी हुए मिथ्या मझा ही इसको समार जेलसे बाहर जाने नहीं देती।

अपनी उमकुमझाके आधार पर ही जीव शरीरके साक्षेमें समारका व्यापार कर रहा है आत्मा शरीरका अपनी इच्छा अनुसार मझता है, आवश्यकतानुसार आत्मा जय शरीरका दाड़न, भार उठाने, सर्दी गर्मी धर्पांम कार्य करने, कठिन परिश्रम करने आदिजा मझेत (इशार) करता है शरीर यैसा ही करता है, और शरीर आत्मान अपने लिये जैसे वस्त्र,

आभूषण, तेल उद्यम, भाजन तथा अन्य पोषण विधाओंके पदार्थ मागता है आत्मा य पदार्थ शरीरको प्रदान करता है। इन तरह शरीर तथा आत्माका साक्षात् सन्धारमें अनादिकालसे घटा आ रहा है। इसी साक्षेके कारण आत्मा शरीरको अपना ही समझ बैठता है, इतना ही नहीं बल्कि शरीरके मोहमें मूर्च्छित होकर स्वयं अपनी शुद्ध शुद्ध भूया बैठता है। शरीरके कारण ही माता, पिता पुत्र, स्त्री, भ्राता आदि विविध व्यक्ति योंके साथ विविध संघर्ष स्थापित करलता है।

इसी मोहभाषेके कारण आत्मा अपने यधनके लिये कर्म यधन स्वयं तैयार करता है कर्मका यंजन होता ता पौरु गलिक है कि तु आत्माके मोह मय भाषेके प्रभावसे ये जड कर्म भी मोह-उत्पादक प्रभावसे प्रभावित होजात हैं, जिनसे समय आने पर उद्यमके समय माह कर्म आत्मा पर माहका प्रभाव डालता है। जैसे कोई शरायी स्वयं नशीली शराय तैयार करता है और जब यह उम शरायका पीता है तब यह शराय उस प्रनुयका अपने प्रभावसे मूर्च्छित कर देती है। इसी तरह ससारी जीव शारीरिक मोहके कारण अपने भाषास कर्म यधन करता है और यह कर्म यधन इस जीवका अपने प्रभावसे विकृत कर देता है। इस तरह भाष कर्म से द्रव्य कर्म और द्रव्य कर्म से भाष कर्म बनता रहता है, कर्म यधनकी परम्परा चलती रहती है। कर्म यधनका मूठ कारण यह एक मिश्रया भ्रष्टा ही है जिसके कारण जीव अपने अनुभवसे दूर रहा आता है शरीरमें अपना पत प्रगट किया करता है। कि तु शरीर निजी वस्तु नहीं न सदा आत्माके साथ बंध रहता है, कभी उत्पन्न होता है कभी नष्ट होता है कभी बढ़ता है, कभी घटता है, अत आत्मा शरीरमें अपनापन मानकर कभी

सन्तुष्ट, शांत, सदा सुखी नहीं बन सकता है, किन्तु सदा व्याकुल बना रहता है।

यदि कभी आत्माकी सौभाग्यसे किसी सद्गुरुका समागम हो जाता है, तो ये दयालु होकर हम मोही संसारी जीवको अपने परमहित उपदेशस मायधान करते हैं कि 'जिस सुख शांतिक लिये तू यहाँ भटक रहा है उस सुख शांतिका अथाह सागर तो तेरे भीतर (शरीरमें नहीं आत्मामें) छिलारे ले रहा है। कस्तूरी छिरणकी नाभिमें कस्तूरी हातो है उसकी मादक सुगन्धिमें यह छिरण मस्त हो जाता है किन्तु भ्रममें यह उस सुगन्धिको अपने भीतरकी न समझकर बाहरकी अथ कस्तूरीकी समझता है, अत इधर उधर दौड़ता फिरता दूसरी-दूसरी चीजोंको खूँचता-खूँच जाता है किन्तु उसकी इच्छा तृप्ति नहीं हो पाती। ऐसेही दशा तरी है। अत बाहरकी ओरसे अपनी विचारधारा हटाकर अपने अंतरंगकी ओर सम्मुख हो अन्तर्मुख होनेपर ही तुझे शांति प्राप्त होगी तरी आकुलता दूर होगी और तेरी परतम्भार बंधन ढीठ होंग। तेरे भीतर अपार अक्षय निधि भरी हुई है तू अपने आपका दीन-हीन क्यों समझ रहा है, एक बार अपनी ओर देख ता सही।"

दीनबन्धु पतितपायन एक तरनतारन अपने सद्गुरुकी हितवाणीको सुनकर जब इस जीवकी मिथ्या भ्रमोंमें परिवर्तन आता है जब इसका हृदयमें आत्म-भ्रम जागृत होती है तब मिथ्या भ्रमोंका जनक (उत्पादक) माहनीय कर्म स्वयं इस प्रकार दूर होजाता है जिस तरह विस्तृत खुले मैदानमें सूर्य उदय होनेपर रातका अधेरा लोपता हो जाता है, छुटने पर भी वहाँ कहीं नहीं देख पाता। मिथ्या भ्रमोंका गहन

अथवा हम ही इन ज्ञान भीतर आत्म इयाति जगमगा जाति है जिमसे आत्माका अपनी अनुभूति (अनुभव feeling) हान गती है। उस स्थ आत्म अनुभूतिमें जीवका महान अनुपम आनन्द प्राप्त होता है वह समारण किसी भी इष्ट भाग उपभाग पदार्थ अनुभवमें नहीं मिलता वह निज आत्माका आनन्द न ता कदा जा सक्ता है, न किसी उपमासे प्रकृत किया जा सकता है। जैसे यूगा मनु य किसी विषयक सुमया स्थय अनुभव ता करता है पर तु किसी अ य व्यक्तिका कला नहीं सकता, ठीक वसीही बात आत्म अनुभवकी हो जानी है। उस आत्म-अनुभवका जैन दर्शनमें मध्यय दर्शन पदा है।

मध्यय दर्शन होने ही जीवकी विचारधारा तथा कार्य प्रणालीमें महान् परिवर्तन आ जाता है। उस फिर अपने आत्माके निधाय अन्य किसी पदार्थमें रुचि नहीं रहती। वह यादरी पदार्थोंका छूना हुआ भी उमर रत (नीन) नहीं होता अतृप्ताना रद जाता है। स्वादिष्ट पदार्थोंका जीभपर रखता हुआ, दातासे उसे चवाना हुआ भी उससे स्वादन अज्ञात बना रहता है। जस मात्मप्रकारकी गीका करते समय प टोपर-मन्त्रीका दाट शाकम पड़ा हुआ कम अधिक नमक मालूम नहीं होताथा।

जा म-अनुभवका सुगन्धित पदार्थोंकी सुगन्धि अपनी आर आवर्षित नहीं करपाती उमर नत्र सुन्दर रगीने पदार्थोंकी देखकर भी अदेवस बन रहत है वह सुन्दर पदार्थोंका देखकर उमर तन्मय या मुग्ध नहीं हुआ करता उससे कान मय कुछ सुनकर भी असुनस रहत है गीत , पाठम इसे जान द अनुभव ना होता।

उस समय वह यदि कुछ छूना चाहता है ता समार

विरक्त धीतरागगुरुओंक घरण हुना चाहता है यदि जीभम
 कुछ करना चाहता है ता धीतराग कथा या आत्मगुण-वचन
 करना चाहता है नेत्रांस मद्रा धीतराग भगवान् तथा गुरुका
 दरशन करना चाहता है शास्त्र पढना चाहता है। उसकी मान
 सिद्ध वृत्ति मसारने विरक्त गार आत्माकी आर मंगल हा
 जाती है।

अत एव गृहस्थाश्रममें रहता हुआ भी गृहस्थाश्रम
 सब कार्य करता हुआ भी उसमें उल्लिख अटूता रहता है अत्र
 पाण्डुस मग्नि नहीं पाता जिम तरह कोरम भी पड़ा
 हुआ माना मेल्य नहीं पाता या जगमें रहता हुआ कमल
 तलम अटूता रह जाता है। भरत उक्तकर्ता इस आत्म अनुभव
 कारण पद गण्डका अधिनायक आर १,००० स्त्रियांका पति
 हाकर भी समस्त भाग उपभागोंका भाग उपभाग करता हुआ
 भी विरक्त रहताया इसीका परिणाम यह हुआ कि दिशा रकर
 आत्म ध्यानमें बैठत ही उतका माह कम तथा आय घाति
 कम क्षय हाकर उक्त ज्ञान हा गया।

सम्यग् दर्शन हात ही ज्ञान और आचरण तीक्ष्ण धारामें
 घट उठने हैं तत्र उनका नाम सम्यग्ज्ञान सच्चारित्र (स्वभा-
 वरणादि) हा जाता है। एसा व्यक्ति अथर्व्य स्व-पकारम
 मसारस मुक्त हो जाना है। यदि कसु समय मसारस रहता
 है, तो अरु पद पर प्रतिष्ठित जोधन स्थिति करता है।
 दुर्गति, नीचगुण दरिद्रघर हीनाग अधिकाग विरक्त शरीर
 नहीं पाता, स्त्री, नपुंसक शरीर उस नहीं मिलता सम्यग्
 दर्शनसे पहले नरकायु य ध कर लनगाग प्रथम नरकमे तीव्र
 नहीं जाता। स्थान, विकृत्य तथा निम्न श्रेणीका देव नहीं
 हाता। अत श्रद्धा ही घीट मय विचे हैं कि तु ममज पृथक
 की दानी चाहिये॥ ॐ शान्ति ३॥

ॐ अर्द्धं नम

श्री प्रभु महावीर

और

पेटाभद्र -- भिन्नता

१-२-३-४-५-६-७-८-९-१०-११ श्री गणधर महाराजजी

श्री महावीर प्रभुके प्रथम धारसदार श्री सुधर्मा स्वामिजी

दूसरे धारसदार श्री जग्यु स्वामीजी

पीछेक भद्रबाहु स्वामीजी म सा क यादक दोना संप्रदायमें
सरिख नाम नहीं मिलते हैं।

१ श्री दिगंबर मध ◁ ——— ▷ २ श्री प्रयतापर संघ

तेरा पथ धीस पथ ताण पथ

मूल संघ अर्थाधीन कानजीम०

पथ काण्टामघादि ॥ इस
संप्रदायमें पंडित, प्रवचारी
भट्टारक शूद्रक पे ३५ औरचैत्यवासी और विचरते मुनि
धर्मिक प्रचारक हैं ॥ दोनोमें
आचार्य उपाध्याय गणि प्रघ
सेक आदि पदधियोको धारण
करनेवाले हैं।१ चैत्यवासी स की अनेक
गच्छ शाखायां हैं।

आचार्य उपाध्याय मुनि आदि
संघक प्रचारक हैं।

१ आचार्य उपाध्याय मुनि
धर्मक यथाशक्ति पालक हैं।

२ पंडित आदि अपनी कक्षा
का धर्मक पालक और
रक्षक हैं।

श्वेतांबर दिगांबर दानां भाई,
प्रेम कंगो भाई अधिक तराई।
णमाङ्गार स्मरो प सुख दाई,
मत्यानन्द' दाता हो सदाई ॥१॥

२ यिखरते मुनियोंकी भी अने
क गच्छ शाखाओं हैं।

मूर्ति निषेधक लाकाराह पथ।

मुहपत्तिसं मुखबधक पथ।

भाव दया स्थानक्यासी
पालक तरा सं

पथ भिन्न भिन्न

पकही पथ है। सप्रदाय है।

△ भी प्रभु महावीरक सर्व अनुयायी नव तत्त्व, स्याद्वाद छ
ब्रह्म, पच महाव्रत, देशव्रतादिकका मानते पालते हैं। सबका
ध्येय स्वाधर जीव तथा प्रस जीवोंकी दया पालनेका है। इससे
सर्वका लाभ ससारसे मुक्त दानेका है तो सब हम एक ही हैं
भिन्नता दिखानी सा मनकी सकृचित्त धृति है ॥

—०—

भैरी कल्पना

जा कि जैन धर्म स्थनत्र है तो भी उसक पर वैदिक
धर्मकी छाया अधिकतर पड़ी है। जैसाकी दि स मे शौच
कमादिकका अधिकतर पालन करना और अस्पर्श स्पर्शका भेद
रखना सा वैदिक सप्रदायकी छाया है, और श्वे स म मूर्ति
पर शणगार करना, जीपीन दिखानादि भी वैदिक सप्रदायकी

छाप है। तद्यपि धर्म तो उपरोक्त तप, जप न्याग वैराग्य और
 ध्यानमय है। व्यवहार नयका आश्रय त्वर अनेक पक्ष सम्प्रदायों
 स्थापना का गढ़। समझायरूप घाटोंमें पूरा गया धानी माकी
 पवित्रताका नहीं पा सकता है। और कदाप्रदा दाकर जीवनका
 अर्थ कर देता है ॥

आराधक आमाजीको तावपायोन विजयम पुरुषाद्य ही
 करना चाहिय और मय प्रपत्र छाडकर समभावम रहना चाहिये।
 अत — 'समभावभाविय अ पा त्ति माक्या त मरुडा' जो
 आमा समभावम रहगा वही सुखी है और सुखी रहेगा।

यही विनम्र प्रार्थना

मुनि बन्धक सागर (म चाण्ड)

॥ दाहा ॥

जस घोरानी भटकत, मित्र मनुष्य अयतार ।
 चेत शके ता चतन, आम कर विचार ॥१॥
 महा मुदियत्से पा िया मानयका अयतार ।
 मफल करल प्रेमस, वर दाय दितवार ॥२॥
 क्षण भगुर इन दहका करता यया दिश्यास ।
 कुटिल काण करगा दि कायाका ही विनाश ॥३॥
 समय जरामा है नहा, आयुष्पका विश्राम ।
 राजा-रक्ष जीव सभी, भगम पार नाश ॥४॥
 चढती पडती सपकी यह दुनियाकी रीत ।
 बद्र कला सुदिम बढे यदिम घट सति ॥५॥
 हर्ष पीछे ही होते है शाक सृज भडार ।
 ज म पीठे ही जीयका मरण निधय कार ॥६॥

तत्र मनकी पीडा टल, भयका हाव ज्ञान ।
 सत चरणका सेवत पाव सुख विधान ॥७॥
 पटित सा ही पिछानिये, पाप भय मन धार ।
 सदाचार-पथमे रह, गुण बही विचार ॥८॥
 नय कमका रूढ़की, जादर घन पकरखान ।
 पुगान कम क्षय करन, तप ही एक आधार ॥९॥

ॐ अर्ह नम

नमो पफाडिय-माह-वालस्त गुण-गाडिजस्त
 निरि बड्र भाण सामिस्त ससार-पार-गामिस्त ॥

दादा

सद्गुरु-चरण-कमर नमु सरस्वति समर मात ।
 पैतीम बोल प्रेम धरा माग सुरा विरयान ॥१॥

- १ नीतिस धन सम हा, २ शिष्टाचार मन लाव ।
- ३ समजुल अय गावन, साथ ही विवाह टाव ॥२॥
- ४ बसो दशाचारम, ५ गप कर्म भय धार ।
- ६ अरण घाडका गलर, उद्यम करा सुखकार ॥३॥
- ७ पढामी प्रेमी जना, प्रहृत द्वार घर धार ।
अति गुन अति प्रगट भी घर भला नहो सार ॥४॥
- ८ सदाचारीया सग भला ९ माय ताय मन भाव ।
विषय करो मात तातका गुण प्रही सुख पाव ॥५॥
- १० उपश्रव स्थानक गारकर घास बसो गुण-कार ।
- ११ निदिन कार्य करा नहो गुण बह भी सुख-कार ॥६॥
- १२ श्रावक देव मर्च करा, १३ धन अनुसार ही वश ।
- १४ (१) जप गुण ही बुद्धि क १५ धर्म सुणा विशेष ॥७॥

- १६ प्रथम सुराक पच्य जाय, पीछे भाजन दुमगा करो।
 १७ मूत्र मूष लग जाय, तब भोजनका मुख धरो। ८॥
 १८ धर्म-अर्थ-काम साधनका, उपम कर निम्नप्रथ।
 १९ अतिधिका आदर करो दीन-दुमी की सय। ९॥
 २० (२) अभिनियमसे पररहा, २१ गुणी जनका पभ-कार।
 २२ निपिद्ध देशकाल टाल्य २३ शक्ति सम काय धार। १०
 २४ पापण योग्यको पीपना, २५ बूढ़ जन यिनय सभात।
 २६ दीर्घ-दर्शी २७ (३) अधिक ज्ञान धर २८ कृपज्ञ
 बना मयपाल ॥११॥
 २९ लोफमिय ३० लज्जा-दुता ३१ दयालु दुख निवार।
 ३२ सुदरावृत्ति मोम्यगुण, ३३ परापकार मन धार ॥१२॥
 ३४ अ-तरंग शत्रु जय करा, ३५ यश करो, इन्द्रिय धाम
 यह पैतीम गुणको प्रेमसे प्ररी यको गुण धाम ॥१३॥
 याल स्थान चित्त लायक दाहा चीद बहु मान।
 'सन्धानम्' सम मातिको कृपा करा भगवान ॥१४॥

- (१) १ जाननकी इच्छा ॥ २ जानना ॥ ३ जानकर याद रखना।
 ४ उसका अर्थ समजना। ५ अर्थ में शंका होता।
 ६ उसका समाधान करना। ७ समाधानसे निशंक होना।
 ८ तस्य निघय करता सो आठ गुण सु०॥
 (२) किसीको पराभव करनकी बुद्धि रक्खकर अनीतिक
 आचरण करना नहीं (बूढ़ कपट नहीं करना)।
 (३) विशेष ज्ञानका यदाना ॥

नाट - उपरोक्त मन्दाकारका सामान्य आचरण द्वरेक स्त्री पुढयक
 करना चाहिये। पीछे आरमाकी खाज करो। परमाहमाके
 पिछानो। अय् इति यही है ॥

अब दश दुःखात्मक मनुष्यभक्षी दुःखभताया विचारण ।

(इन्द्र तथा लक्ष्मि)

य प्राप्य दुःखात्मकमिदं नरस्य
धर्मं न वदन्तं कराति मृत ।
तत्रैव प्रथमं न लक्ष्मि उी
विश्रामणि पानयति प्रमद्वान् ॥१॥

भाषा— दुःख ऐसे मनुष्य भक्षी पाकर जो मूर्ख धर्मही
साधनामें यत्र नहीं करता कि वह मराने करत मान किय हुए
विश्रामणि रक्षाया आश्रयन समुद्रमें फेंक देता है ।

यहाँ पर मनुष्य भक्षी दुःखभताय विषयमें शास्त्र प्रसिद्ध
दश दुःख हैं जो सा संक्षेपमें नीम्न-नीच दत्त हैं । ता उनका
विचारकर पुरुषार्थ क्या ।

१-शुल्क-गुणक विषयमें दुःखात्मक ।

एक नगरमें भेष्ट काम्पिन्य नामक नगर था । उस
नगरका स्थायी मद्य नामका राजा था ॥ उस राजाके मनाहर
दपयनी शुल्की नामकी रानी थी । उनको राज्य थाय मद्यदत्त
नामका पुत्र था । राजा कारणत ब्रह्मराजाकी मृत्यु हुआ ।
मद्यदत्त बालक था, इसलिए राजाके दो मिथान भेजे हुए
दीर्घकृ नामक राजाका उसके राज्यकी सहाय लेनी पड़तीथी
यह शुल्की रानीमें आमक हा गया था । यह बात पाकर
मद्यदत्तने जान ली ता दीर्घकृका अत्याचारम छुटाने के लिये
मद्यदत्तने यह दुःखात्मक दिखलाय । जैसे कि-उत्तम नागिकाके
साथमें गानम नामका लालक गोनमका बौद्ध लगाकर कहाकि
“ हे पापी ! तरा पद नागिकाके साथ कैसेमा ? दूसरों पर
राजहमी और एक बीआ लाकर बीपका बदन लगाकि-ह

कीजा। मेरे राजकुमारों में ममथ है। क्या उसे ? नहीं छोड़ेंगे। तब
 सुन मां हुआ, क्या कहकर जीवने मार दिया गया। इसका
 राज का दुःख। श्रीमद् गुरु गुरु मयभीत हुआ। श्रीमद् गुरु
 कहा कि 'तब पाठशाळा में सुन भव लगता है इस लिये
 उसका नामात्मा थादिय तब श्रीमद् गुरु कहा कि-मेरे उनका
 पिताश कर्मगो, आप निमित्त न रह ' यह है स्वार्था संसार
 पीठ गुरुजीन पर लाक्षागुरु बनवा दिया गया। इस तरह मंत्री
 वरधनुका चान पदत ही पाठ शाळाकी रखा। लिये उसका
 वरन लग गया। गंगा किनारमें लाक्षागुरु तब पर सुरम
 सुदयाह। लाक्षागुरुमें ही सुरगदा द्वार सुन रखा गया अतः
 गंगा किनार सुरग द्वारपर सीपही-गुटिर बनवाकर रहने लगा
 और अपन पुत्रका ब्रह्मदत्तकी रक्षा लिये साथ रहनेका कहा
 और कहाकि- यह भणभी ब्रह्मदत्तमें गुरुक मत दाना बर्षादि
 यह पुरुष मत्त है। इसका बहुतमे रिक्त है इस लिये यमद
 साथ रखा करनी थादिय, उसका नाममे सबकाही नाम है।"
 पिताशो शिभाशो स्वीकार कर मंत्री पुत्र राज-द्वार कुमारकी
 तथा करना है और भण भर भी प्रथम नहीं जाता। इतनमें
 श्रीमद् गुरुन पुत्रका निवाह कर, परिणीत युगको रहनेक
 लिये लाक्षागुरु दिया और अधरात्रिच समयमें आग लगवाई
 गई। लाक्षागुरु भस्मभूत दान लगा। उसी समय मंत्री पुत्रने
 उठकर राजकुमारका जाग्रत किया। कुमारन उठकर बागी
 भाग मन्थरित अग्निको दगा किन्तु निहर आर उत्तम पुरुष
 दानमे रघु साथ भी भयभीत न हुआ। साहन और धैर्यकी
 पीला निमित्त मंत्री पुत्रने कुमारस पूछा कि-"अब क्या होगा?"
 तब कुमारने कहा कि-"जमी भयितव्यता होगी किसी महाव
 निरत। वेद कुमारक यमनका सुतकर मंत्री पुत्रने सीधा कि
 यह कुमार साहन निधान पुरुष प्रधान है इसको अवश्य कार्य
 सिद्ध स्थापित होगा।

अत - उद्यम साधन धैर्य बल बुद्धिपराक्रमे ।
 पदेत यस्य विद्यते तत्र देवोऽपि शंकरे ॥

अर्थ - उद्यम साधन धैर्य बल बुद्धि और पराक्रम यह छ जिसका हात है उसमें दय भी शका करता है (हम ताहै) ऐसा जानकर बुद्धिकी परीक्षाक निमित्त कुमारसे पूछा कि-“जय यन्में दायानल गता है तब चिटियाका क्या आय होता है और दायानलम केस मुन हाती है? यह सुनकर ब्रह्मदत्तकुमारने कहाकि- चिगी वित्र में घुसती है ता दायानलमे छुटती है हम उत्तरका सुनकर कुमारको बुद्धिशाली जानकर मन्त्रीसुनुत कहा कि हम भी चिटियाकी तरह वित्रमें घुस जाय । फिर सुरगका द्वार दिवाया और लात प्रहार करनेकी सूचना सुनत ही ब्रह्मदत्तन लातन प्रहारसे सुरगद्वारको बालदिया । फिर दाना कुमार सुरंगमागसे गगानत पर आकर परधनु मन्त्री-रक्षा मिल । मन्त्रीश्वरने कहाकि- ‘तुम दाना दशांतर चल जाआ यहाँ मत रहा । पेना सुनकर आशा प्रमाण कत्रकर य दाना निकल गय । बहुतसे दशामें घुमें । बारह वर्ष तक धन और बहुत-सी मित्रिया प्राप्तकर चतुरग से य प्रेषित किया । जय देशान्त करतय तत्र एक ब्राह्मण भी साथमें रहकर सुगदुख सहन करताया । जय दानाका विछुडन का प्रमन प्राप्त हुआ तब ब्रह्मदत्तने कहाकि- ‘जय तू पेना सुनेगा कि ब्रह्मदत्त काम्पिल्य नगरका राजा हुआ तब शीघ्र ही यहाँ आना और उम समय जना मुझसे उपकार हागा पेना करूगा ।’ पेना सुनकर फिर ब्राह्मण अपन स्थान पर गया । अब ब्रह्मदत्तने बहुतसे तैनिकालेपरिवृत शोकर काम्पिल्य नगरमें आकर दीर्घपृष्ठराजाका ध्यस कर पिताक राज्यका पुन प्राप्त किया और बारह वर्ष तक चक्रवर्तिरत्नका राज्याभिषेक, ब्रह्मदत्तका

आरंभ किया। महात्म्य बड़ी भूमधामस मनाया। इस प्रकार धारहर्षा चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त राज्यका पालन करने लगा।

उसके पास चौगमीलक घाट चौगमीलक रथ, छिया न उशोत्रि पायदत्त मना, नथ निधान चौदरसन चौमठ सहस्र अत पुर पकगाल अट्टारमहजार विलासिनी छिया, बहतरदजार महानगर, बसौमहजार दश यतीमहजार मुकूटयद राजा यतीम लाख यार्जिप्र मोरद महस्र द्यता तीनगाल रसाई यनानवाले छियानवकारि प्राम इत्यादि समृद्धि सम्पत्त स्वाय किाठ, समाम्पूर, राजाधिराज छ रंडम प्रसिद्ध ब्रह्मदत्त था। यह बात उस ब्राह्मणन सुनी। हर्षित पाकर चक्रवर्तीस मिलनके लिये कापिल्यपुरमें गया। राजद्वार पर पहुचने पर, पहरेदार गीने प्रवेश करने न दीया। तब ब्राह्मणन सीधाकि-जिमके साथ हम रातदिन साथमें माते बैठतथे, आज उसका दशन भी दु-भ हुआ। वैसी कमकी विचित्रता है! अस्तु। अब किसी युक्ति बिना चक्रवर्तिका दशन सुलभ नहीं है। वेना साथ कर एक लघा यौन लेकर उनपर एक पुरान जुताकी माला पहनाकर स्तम्भकी तरह धी-रमें गाइकर रखा। इतनेमें चक्रवर्तकी सभारी आ रही थी। चक्रवर्ताने अनाखा ध्वजा देखकर, उसकी बूनाया और ब्राह्मणका दस्तदो पहचन लिया, और दुस समयका मिथ जानकर अत्यंत आदर सम्मान किया और अपूर्व बख पहनाकर अपन अर्धासनपर पालनामें साथ बिठाकर स्वागतपूर्वक वृशन्ता पूँछकर स्नानादि विधि कराकर भाजन कराया। कई दिन इस प्रकार घिनाद-गावठी पूषक बीत गये। फिर चक्रवर्ताने ब्राह्मणसे कहाकि- 'तुम मुझसे इच्छानुसार कुछ माँगना जिससे मैं घाणीके प्रदणसे मुक्त होजाऊँ।' तब कहाकि- मैं अपनी पत्नीसे सलाह लेकर आपसे

[ए माँग लूंगा " पेमा कटाकर घर पर आया और स्त्री में शक्यतिकी प्रसन्नता और माँगनेकी यात्र कहकर क्या भावना पाहिय यह पृष्टा। स्त्रीने साचा कि-अगर देश भाडार माँगनक लेय कभी ता फिर य मुझे छाड़कर दूमरी पनी लायेंग और परिग्रहकी घृद्धिदाती रहगो, इसलिये ब्राह्मणको ता भोजन सहित दक्षिणाकी आवश्यकता है। पेमा साबकर भाजन सहित दक्षिणाकी यात्रनार लिय सगह दी। ब्राह्मण यह सलाह लेकर शक्यतिक पास गया और माँग कि- पहन भाजन दाना स्त्री रूपको आपन यहाँ कराकर एक सानामहोर दक्षिणामें दे और नहीं जहाँ आपकी आज्ञा प्रचलती है, उन सब दशोमें एक दर पर भोजन और दक्षिणा मिलती रह। " पेमा माँगनेपर शक्यतानि साचा कि- 'जिनका जितना प्राप्त्य होता है उतना ही प्राप्त होता है। " पेमा जानकर ब्राह्मणका वचन स्वीकार किया और प्रथम ही अपने घर पर निमग्रण देकर भक्ति सहित दूर्यपाक रसवतीसे भाजन कराकर दक्षिणा देकर सस्तुष्ट किया। [मरे दिन अथक यहाँ भाजन और दक्षिणा दी गई किन्तु शक्यतिर यहाँ जिस सूयपाक रसवतीका भाजन कियाथा, उस रसकी स्मृति यनी रहनेसे ब्राह्मण दम्पतिका यह अभिलाषा हुआ करतीथी कि फिर कब शक्यतिक यहाँ भोजन हागा किन्तु प्रत्येक घरमें जिनमें हुए छ दस पृथ्वी कब पूरी हो और कब सूयपाक रसवति मिले ? यह जैसा दुग्ध है पेमा ही सोये हुए मनुष्य भवशा पाना दुग्ध है। यह पहन दुग्ध है।

द्वितीय पामग दृष्टान्त।

पाटलिपुत्र नामका नगर था उसमें न दरजा राज्य कर ताथा। उसमें एक ब्राह्मण रहताथा। यह भावकक बारह बर्ताका

कोई जान ही न शके पसी युक्ति काक मयर्णमय एक था
 सभामें रत दिया और लागोस कता कि- यदि तुममेंस काई
 भी मुक्त जीतले तो म यह थाल उम दे दू। यदि में जीता
 ता एक सानामहार रूंगा। " बहुतस लाग सानामहारस
 भरे हुए थाले लाभसे खलनर लिय आये किन्तु काई भी
 जीत न सका राजाना भरन लगा। इसमें एक कठियारन भी
 आ जम तक परिधम करक प्राप्त हुइ एक सानामहार हारकर
 दे दी अब जैसे कठियारेको मार प्राप्त हाना दुलभ है। वैसी
 ही मनुष्य पयाय भा मिलना दुलभ है। यहाँ तक कि कठि
 यारेको कटाचिद सानामहारकी प्राप्ति हा भी जाय किन्तु साये
 हुए मनुष्य भयको प्राप्ति अति दुलभ है।

तीसरा धान्यका दुष्टा त।

कोई देय जम्बुद्वीप में जिनना धा य है उन धा यका
 एकप्रित करक महनुल्य उच्च राशी बनाय। उममें एक सर
 सरमोत्र दानका मिलाय जाय और सबको पसा मिलाया जाय
 कि दाना भी न देत पाय। फिर जीर्ण-शीर्ण अस्सी घर्षको
 बुढ़ियाको एक खूप देकर जा सरमात्र दान मिलाये गये हैं
 उनको पृथक् करनेको कता जाय। जितना सरमात्र दान पृथक्
 करना दुर्लभ है वैसा ही मनुष्य भय पाता है ॥

५

एक राजा

बद सभा २।

राजाका पुत्र

राज्य लेलें

बर्त

कही। राजाने पुत्रका दुःखकर कहा कि—“अपन बशके अनुकमकी जा नहीं सहन करता है यह जूआ खेलता है। जो जितता है उसका राज्य दिया जाता है।” तब पुत्रने कहा कि किस रीतिसे जीता जाता है। तब राजाने कहा कि “एक दाव तुम्हारा हाता है और बाकीय दाव हमारे हात है और इस समार १००८ स्तम्भ कातामें १००८ दार यदि तू जीता तो तुम्हें राज्य मिलेगा।” जैसा यह होना दुःख है धैर्या ही मनुष्य भव पाना दुर्लभ है। यदि दैवकी कृपामे जीत लिया भी जाय किन्तु पर धार ग्राया हुआ मनुष्य भव पाना दुःख है।

पाँचवाँ स्तम्भ दृशत।

एक घृद्ध घणिक था। उसका पाम बहुत-से रत्न थे। उस ग्राममें और भी व्यापारी थे। उन्होंने किसी महोत्सवमें कोटि ध्यज लगाये थे, किन्तु उस घृद्ध घणिकने अपने यहाँ काटि ध्यज नहीं लगायेंथे। एक समय कायवश यह प्रदेश गयाथा, तब उसका लड़काने उन रत्नोंका विदशस आये हुए व्यापारियोंका हाथ जब द्विय और उ हानि भी अपने मकान पर काटि ध्यज चढाय। य रत्न लनवाल व्यापारी स्वदेश चले गये। तद् पश्चात् यह घृद्ध घणिक आया। अपने यहाँ काटि ध्यजका दंग, और रत्नोंका घेचनका हाट सुनकर, लड़कोंको उलाहना देकर जल्दीसे ये रत्न वापिस लानेके लिये कहा गया। ये सब देशामें घूमने लग, किन्तु उ होंका रत्नोंप्राप्त होना जैसा दुर्लभ है धैर्या ही मनुष्य भव भी दुर्लभ है। यदि दैव यागत सब रत्ना मिल जाय परन्तु द्वारा हुआ मानव भव पाना दुर्लभ है।

छठा स्तम्भ दृशत।

एक मुसाफिर अपने स्वप्नकी बात अ य मुसाफिरोसे कहता

काई जान ही न शके पमी युक्ति कस्य मयर्णमय एक धात्र
 सभामें रय दिया और लागाम कहा कि- यदि तुममेंन काई
 भी मुझ जीतल तो म यह धात्र उन दे दूं। यदि मैं जीता
 तो एक सानामहार लूंगा। " बहुतस लाग सानामहारन
 भरे हुए धात्र लाभस खलनर त्रिय आय किन्तु काई भी
 जीत न सका राजाना भरन लगा। इसमें एक कटियारन भी
 आ जम तक परिधम करव प्राप्त हुई एक सानामहार हारकर
 दे दी अब जैस कटियारका महार प्राप्त नागकुल म है। यैमी
 ही मनुष्य पर्याय भी मिलना दुर्भ है। यहाँ तक कि कटि
 यारका कदाचित् सानामहारकी प्राप्ति हा भी जाय किन्तु तीय
 हुए मनुष्य भयकी प्राप्ति अति दुर्भ है।

तीसरा धार्यका दृष्टान्त।

काई दय जम्बूद्वीप में जितना धार्य है उन धा वना
 एकप्रित करन मेरुतुल्य उच्च राशी यताये। उनमें पर मर
 सरमाय दानको मिलाय जाय और सबका वेसा मिलाया जाय
 कि दाना भी न देख पाय। फिर जीर्ण-शीण अस्मी धपका
 बुद्धियाको एक खूब देखर जा सरमाय दाने मिलाये गये हैं
 उनको पृथक् करनेकी कडा जाय। जितना सरमाय दान पृथक्
 करना दुर्भ है यैसा ही मनुष्य भय पाना दुर्भ है ॥

चौथा दृष्टका दृष्टान्त।

एक राजा था। उसकी सभामें १००८ स्तभ थे। यहाँ
 यह सभा करताथा। एक एक स्तभमें १००८ कीने थे। उन
 राजाका पुत्र सोचताथा कि यह राजा बुद्धा हुआ है इससे मारकर
 मैं राज्य लेंई। यह बात मंत्रीका चिदित हुई और उनने राजासे

वही। राजाने पुत्रया सुलावर कहा कि- अगने दशवे अनु
क्रमशी जा गहाँ महन करता है दद वृथा गेलता है। जो
मिलता है उनका भाग्य दिया जाता है। तब पुत्रने कहा कि
दिन रीतिसे जीता जाता है। तब राजाने कहा कि "एक
दाव मुम्हारा हाता है और बाकीय दाव हमारा हात है और
इस समार १००८ स्तंभ वानासे १००८ दार यदि गू जीता तो
तुम्हें भाग्य मिलगा।" जैसा यह दाना दुर्लभ है यमा भी मनुष्य
भय पाना दुर्लभ है। यदि दूवशी कृपाम जीत लिया भी जाय
किन्तु पर बार गाया हुआ मनुष्य भय पाना दुर्लभ है।

पंचम्यां रत्नका द गन्त।

एक वृद्ध पणिक था। उसका नाम पहलु-ने रत्न था।
उस ग्राममें और भी व्यापारी थे। उम्होंने किसी महारमधमें
काटि पञ्ज लगाय था, किन्तु उस वृद्ध पणिकने अपन यहाँ
काटि पञ्ज नष्ट लगायेथे। एक समय वायव्य यह विद्वश
गयाथा तब उसका लड़काने उन रत्नाका विद्वशस आय हुए
व्यापारियाके दाव यथ दिय और उम्हाने भी अपन महान पर
काटि पञ्ज नष्टाय। ये रत्न सनशाल व्यापारी स्वदेश चल
गये। तद् पश्चात् यह वृद्ध पणिक आया। अपन यहाँ काटि
पञ्जका दग, और रत्नाका घेघनका हात् सुनकर, लड़किका
उलाहना देखर जल्दीस ये रत्न वापिस लाय लिय कहा
गया। ये सब दशामें मूमने लग, किन्तु उम्होका रत्ना प्राप्त दाना
जैसा दुर्लभ है, जैसा ही मनुष्य भय भी दुर्लभ है। यदि देव
यागत सब रत्ना मिल जाय परन्तु दारा हुआ मानव भय
पाना दुर्लभ है।

छठा स्वप्नका द गन्त।

एक मुसाफिर अपन स्वप्नकी बात अन्य मुसाफिरसि कहता

कोई जान ही न शके उसी युक्ति का यह सवर्णमय एक धातु लभार्थ रख दिया और लांगोले कहा कि- यदि तुममें से काई भी मुझे जीतल तो मैं यह धाल उस दे दू। यदि मैं जाता तो एक सानामहार लूंगा। " बहुतसे लोग सानामहारस भरे हुए धातु लभस खलनर लिये आये किन्तु काई भी जीत न सका खजाना भरन लगा। इसमें एक कटियारन भी आ ज म तक परिश्रम करन प्राप्त हुई एक सानामहार हारकर दे दी अब जस कटियारेका महोर प्राप्त हाना दुर्लभ है। वैसी ही मनुष्य पर्याय भी मिलना दुर्लभ है। यहाँ तक कि कटियारका कदाचित् सानामहोरकी प्राप्ति हो भी जाय किन्तु साथ ही मनुष्य भयको प्राप्ति अति दुर्लभ है।

तीसरा धातुका दुर्लभता।

कोई देश जम्बूद्वीप में जितना धातु है उन धातुका एकप्रति करन मेरुतुल्य उच्च राशी बनाये। उनमें एक मरु सरमोरे दानेका मिलाय जाय और सबको वेला मिलाया जाय कि दाना भी न देय पाये। फिर जीर्ण-शीर्ण अम्मी वपको युद्धियाको एक रूप देकर जा सरमोरे दाने मिलाय गय है उनको पृथक् करनेका फल जाय। जितना मरमोरे दान पृथक् करना दुर्लभ है वैसा ही मनुष्य भय पाना दुर्लभ है ॥

चौथा धातुका दुर्लभता।

एक राजा था। उसकी सभामें १००८ स्तम्भ थे। वहाँ यह सभा करताया। एक एक स्तम्भमें १००८ काने थे। उन राजाका पुत्र सोचताथा कि यह राजा युद्धा हुआ है, इसस प्रकार मैं राज्य ले दू। यह बात मन्त्रीका विदित हुई और उनने राजासे

वही। राजाने पुत्रवा सुल्कावर कहा कि— 'अपने पक्षक अनु-
 कर्मको जो नहीं मान करता है वह ब्रह्मा होलगा है। जो
 सितता है उसका राज्य दिया जाता है।' तब पुत्रने कहा कि
 किस रीतिसे जीता जाता है। तब राजाने कहा कि "एक
 दाय सुम्हाग हाता है और बाकीय दाय हमारा हाता है और
 हम समाह १००८ स्वध नाममें १००८ दाय यदि पूं जीता तो
 तुम राज्य मिलगा। जैसा यह हाता दुर्लभ है वैसा ही मनुष्य
 भय पाता दुर्लभ है। यदि देखी कृपाम जीन लिश भी जाय
 किन्तु एक बार गया हुआ मनुष्य भय पाता दुर्लभ है।

पानिनी रत्नवा ह गत।

एक बृद्ध पण्डित था। उसका नाम पद्म-से रहन था।
 उस नाममें और भी श्यापारी था। उम्हाने किन्ही महोरसधमें
 वाटि एयज लगाय था किन्तु उस बृद्ध पण्डितने अपने यहाँ
 वाटि एयज नहीं लगाय। एक समय कायचक यह विदेश
 गया था तब उसका लड़काने उन रत्नोंवा विदेशसे आये हुए
 व्यापारिकोंके हाथ गये और उम्हाने भा अपने महान पर
 वाटि एयज कहाय। य रत्न लनवाल व्यापारी एयदेश चले
 गये। तब पद्मान यह बृद्ध पण्डित आया। अपने यहाँ वाटि
 एयजका दाय और रत्नोंवा घघावा हात् सुमवर, लड़कियों
 ललाहना द्वर जल्दीत य राम चापिस लानक लिय कहा
 गया। य सब देशमें प्रमन लग, किन्तु उम्हाने रत्नोंवा हाता
 समा दुर्लभ है वैसा ही मनुष्य भय भी दुर्लभ है। यदि देव
 नाम सब रत्नों मिल जाय परन्तु दारा हुआ मानव भय
 पाता दुर्लभ है।

एतद्वा एयप्रवा नू गत।

एक मुसाफिर — प्रकीर्णत लभ्य

हुआ कहता है कि- मैं स्वप्नमें चंद्रका निगल गया। उन्होंने कहा कि-संपूर्ण चंद्रमंडल जैसी घी चुपटी हुई रोटी मिलेगी और यह मिली भी मही। वहाँपर दूसरे मुसाफिरन भी उसी स्वप्न को देखा था। उनमें स्नान कर हाथमें पुष्प और फलादिका लेकर स्वप्नपाठकके पास जाकर स्वप्न कहा। और फलकी पृच्छा करी स्वप्न पाठने के कहा कि-तू राजा होगा। इधर मानने दिन राजाही मृत्यु हुई, यह अपुत्र था। यह मुसाफिर जो राजा दानेवाला था यह बंधकर घेठा था। उसी समय अधिधामीत घाटा आया। उसने उसका देखकर झूलार दौया और प्रदग्निना कि। यह मुसाफिर राजा हुआ। यह बात उस राती पानथाल मुसाफिरने सुनी। उसने भी ऐसा ही स्वप्न देखाया। फल आदेश ही भदस यह राजा हुआ। यह सावता है जहाँ मारम मिलताही यहाँ जाऊँ और गोरसका पातकर स्नानसे मैं फिर भी उसी स्वप्नका देखूगा कि-तु यह स्वप्नको नहीं देखता। येने ही जा बंधवार मनुष्यभव पाया हुआ साता ३ उसको फिर मित्रता दुग्भ है।

मानवी चय व दृष्टान्त

इन्द्रपुर नामका नगर था। यहाँ इन्द्रदत्त नामका राजा था। उसका राज्य लड़क था। य भिन्न भिन्न इष्ट रानियासे उत्पन्न हुए थे येना किमीका मत है और अन्यका कथन है कि य एक रानीके पुत्र थे येना मतान्तर है। य सब सबके राजाका प्राण ममान थार थे। अन्य एक मंत्रीकी पुत्री भी राजाही रानीथी। कि-तु इसका राजाने विवाह फालमें ही दयाथा। एक समय कभी यह अमात्य-दुष्टिता शत्रुनुस्नाता खड़ीथी। राजाने अपन स्वयंसे पृच्छा कि-यह क्यों है। सेवकने कहा कि यह तो आपही वन्दी है तब राजा एक रात्रि उसका साथ रहा

और राजाने उसे गम रह गया। गम रहने में मन्त्री अपनी पुत्र से कहकर या कि जब तुम गर्भ रह तब मुझे समाचार देना। उसने मन्त्रीसे अपनी गमकी बात कही। मन्त्री ने वह हीन, वह मुहूर्त, राजा के साथ हुए सब बातें लिखकर एक पत्रमें लिखकर पुत्र के पास रखी। तब मन्त्री ने राजा के पुत्र को उम्पन्न हुआ। उसने मन्त्री के यहाँ उसी दिन चार लड़के उम्पन्न हुए थे जिन्को नाम अग्नि, पथक, पाहुल और माग था। अमात्यने उस रात पुत्रको कलाघायक नामक नाम मीमनेय लिये रखा। उसने लिखनादि गणित प्रधान सब कलाय सिखाया। उसी आचार्यक नाम से वारस राजा के प्राणप्रिय लड़के भी पढ़ते थे किन्तु जब आचार्य कुछ पढ़ाता था, तब ये सबके सब आचार्यका मन कर देते थे और गाँवा तानी करते थे, इसलिए ये कला सीखने शक। जब आचार्य बुझला कर मारपीट करते थे तब ये ईद मंत्र करते थे और घर जाकर मानात्रेस कह देते थे। रानिया आचार्यका उलाहना देती थी और मार देती थी और इन प्रकार सब लड़के विषा प्राप्त न कर शक।

इधर मथुरा नामकी नगरीमें जितशत्रु नामका राजा था। उसकी निवृत्ति नामकी कन्या थी। कन्याका अल्बारादि पहनाकर राजा के पास लाया गया। राजाने कहा-तुम्हारे इच्छानुसार पति पसन्द करा। कन्याने कहा-जा शूरवीर पराक्रमी हा यह मेरा पति है। राजाने कहा कि-तुम्हारे हानघाले पति का मैं राज्य दूँगा। तदनन्तर वह कन्या श्रेय और शासन लेकर इन्द्रपुर नगरमें ग-ई कन्याके इन्द्रदत्त राजाकी बहुत ही पुत्र थे। इन्द्रदत्त राजा साधता है कि-मैं निश्चयसे अग्य राजाओंसे अधिक भाग्यशाली हूँ, जिसेस कि यह कन्या स्वयं आई है। उसने नगरको अशोभित किया। एक रंगमण्डप -

और एक थम लगता। थमेर आठ आरेगले आठ घण्टे
 उसपर एक पुतली घनवाई थी। पुतलीकी आँख नीचे रखे हुए
 तैलपात्रमें पड़ी हुई छायाका देखकर धींधी जायगी।
 इन्द्रदत्त राजा स नद्व हाकर पुत्राक साथ रगमडपमें आया।
 वह क था भी मर्क अलकागादिम विभूषित हाकर एक स्थान
 पर आकर पाममें बैठा। सब सभा जय भर गई तब राजान बड़े
 धोमानी नामयाल पुत्रम कहाकि हे पुत्र, यह कन्या और राज्य
 ग्रहण करना है इस लिये इस पुत्राका ग्रह डालो।" उसने
 धनुष्यबेधका पूरा अभ्यास हीनर्दा किया था जिनसे धनुष्यको
 ग्रहण करनेमें भी अशक था। फिर जैसे तैने धनुष्यका ग्रहण
 किया। वही भी घाण जाय ऐसा साचकर धनुष्यसे शर छाड़ा।
 वह शर चकमें आकर दूर गया। इस प्रकार किसीके शरने
 एक चक्रको उल्लघन किया। किमक दो और बहुतसे तो शर
 चक्र पाहर ही निकल गये। तब राजाको बहुत दुःख हुआ
 कि इन लड़कान मुझे लज्जित किया। तब मंत्रीने कहा 'क्यों
 दुःख करते हो ? राजान कहा 'इन लड़कान मुझे अपमानित
 किया। मंत्रीने कहा 'आपका मरी पुत्रोस उत्पन्न हुआ लड़का
 भी ता है। जिनका नाम सुर द्रदत्त है और वह धनुष्यदमें
 समर्थ भी है।' उसका सब अभिमान भी वह दिये तब
 राजाने कहा 'हे मंत्री, यह कहाँ है ?' मंत्रीने दिखाया तब
 राजान उससे कहाकि 'तुम यह आठ चक्रोंका भेदन कर
 पुत्राकी आँखका रीधकर राज्य और निवृत्ति कन्याको प्राप्त
 करतहा क्या ?' तब कुमारने जैसी आपकी आज्ञा' ऐसा
 कहकर यथास्थान स्थित हाकर धनुष्यका ग्रहण किया। दो
 मनुष्य दाना आर नंगी तलवार लेकर खड़े हैं और कहते हैं
 कि अगर ग्रह्य चुक गये तो तुम्हारा सिर कटा जायगा'
 और आचार्य भी पाममें खड़े रहकर भय दिग्बलात हैं, 'यदि
 स्खलित हो गया तो मारा जायगा' ये चारुम कुमार भी विशेष

स्वयं विद्वान् वरत यः । मनन मयकी आरस आर्वा पर कर
 चर्चाक अन्तरका जानकर, लक्ष्यमें दृष्टि रम्बकर पयचित्त हाकर
 पुनलीकी याह आँव यध ढापी । लाग म र्पनाद हुआ । जैसा
 यह चर्चाक भेदा करना दुर्लभ है वैसा ही मनुष्य भय भी दुर्लभ है ॥

आटर्षा चर्म का दृष्टान्त ।

एक शतमदल याजन विस्तारवाला पानीका द्रव था ।
 जो चमसे आच्छादित था । उसमें मध्यमें एक छिद्र था जिसमें
 वृक्षकी गहन आ मयनीधी । उसमें वृक्षपत्त सौ वर्ष बीतने
 पर घोषका याहर निकालना था । उसने एक समय जय
 घोषाकी निकाला उतनेमें उसमें प्रकाश दया । चाँदनीमें पुष्प
 और फला का भी दया । यह गया भीतर द्रवमें क्याकि उसमें मनमें
 विचार आया कि मैं अपन स्वजनाका भी यह प्रकाश पुष्पादि
 का दशन कराऊँ । स्वजनाका ला कर चारों आर घूमता है
 कि तु यह छिद्र मिलताही नहीं है । यदि दीय यागसे मिल
 भा जाय किन्तु छाया हुआ मनुष्यभय दुर्लभ है ।

नीर्षा युग का दृष्टान्त ।

पूर्व समुद्रमें युगका झग जाय और पश्चिम समुद्रमें
 समीपका झग जाय, यह युगक छिद्रमें समीपका प्रवेश जैसा
 दुर्लभ है वैसाही मनुष्यभय दुर्लभ है । यदि कदाचिन् प्रवण्ड
 गायुकी लहरास प्रेरित हाकर समीपका प्रवेश छिद्रमें दीय
 यागसे हा जाय किन्तु मनुष्यभयका पाना अति दुर्लभ है ॥

वर्षा परमाणुका दृष्टान्त ।

१ एक दधने उसका
 गिरिफ शिखर पर जाकर

और एक धर्म लगवाया। यंत्रों पर आठ आरेखों के आठ चक्रों पर
 उसपर एक पुतली बसवा दी थी। पुतली की जाँच नीचे रखे हुए
 तैलपात्र में पड़ी हुई छाया का देखकर थीं जायगी।
 इन्द्रदत्त राजा सनद्व हाकर पुत्राय साथ रगमहपमें आया।
 वह कथा भी सर्व अत्रशागादिम विभूषित हाकर एक स्थान
 पर आकर पानमें बैठी। सब सभा जय भर गई तब राजान बड़े
 घोमाली नामधाले पुत्रम कहा कि 'ह पुत्र, यह क्या और राज्य
 ग्रहण करना है इन लिय इन पुतलीको बंध डालो।' उसने
 धनुष्यबधका पूरा अभ्यास ही नहीं किया था, जिनसे धनुष्यको
 ग्रहण करनेमें भी अशक था। फिर जैसे तैने धनुष्यका ग्रहण
 किया। वही भी बाण जाय वेना साचकर धनुष्यसे शर छोड़ा।
 वह शर चक्रमें जाकर दूट गया। इन प्रकार किसीक शरने
 एक चक्रका उल्लंघन किया। किन्तु दा और बहुताय तो शर
 चक्रक बाहर ही निकल गये। तब राजाको बहुत दुःख हुआ
 कि इन लड़कान मुझे उल्लिखत किया। तब मंत्रीने कहा "क्यों
 दुःख करने हा?" राजान कहा 'इन लड़कीने मुझे अपमानित
 किया। मंत्रीने कहा 'आपका मरी पुत्रोस उत्पन्न हुआ लड़क
 भी ता है। जिनका नाम सुर द्रदत्त है और यह धनुष्यको
 समर्थ भी है।? उनका सब अभिमान भी यह दिये ता
 राजाने कहा 'है मशी, यह कहाँ है।?' मंत्रीने दिखाया ता
 राजान उससे कहा कि तुम यह आठ चक्रोंका भेदन क
 पुतलीकी आँखका भींधकर राज्य और निवृत्ति क्याको प्रा
 करतेहा क्या?' तब कुमारने 'जैसी आपकी आज्ञा' वेस
 कहकर यथास्थान स्थित हाकर धनुष्यका ग्रहण किया।
 धनुष्य दानी आर नगी तलवार उकर खड़े हैं और कहते
 कि 'अगर लक्ष्य चुक गये ता तुम्हारा सिर कंग जायगा
 और आचार भी पानमें रखे रहकर भय दिखलाते हैं, 'यदि
 स्थलित हो गया ता मारा जायगा' ये वारुन कुमार भी विशेष

एक गिरा करत थे। जमने सगरी औरसे अर्था पर कर
 कंक अ तरका नातकर अक्षयमें अत्रि गम्बर एकचित्त हाकर
 लीकी वाह अत्रि यध हाती। लाग म अर्चनाद् हुआ। जमा
 इवज्ज। भेदन कृता दुलभ है, धमा ही मनुष्य भव भी दुर्लभ है ॥

आठवाँ घम का दशांत ।

एक शतमहस्र योजन विस्तारवाग पानीका द्रव था।
 वा घमम आच्छादित था। उमक मध्यमें एक छिद्र था जिममें
 कृष्णरी गहन आ मकतीर्यो। उसमें कच्छप सी वर्ष धीनन
 पर शोभाका वाहर निकालता था। उसन एक समय जय
 प्रोशाका निकाला जतनेमें उमक प्रकाश द्रव्या। चाँदीमें पुण्य
 और फलों का भी द्रव्या। यह गया भीतर द्रवमें कर्षाकि उसक मनमें
 विचार आया कि मैं अपने स्वजनाका भी यह प्रकाश पुण्यादि
 का दशन कराऊँ। स्वजनाका ग कर चाणो आर धूमता है
 किनु यह छिद्र मिगताही नहीं है। यदि देव योगस मित्र
 भा जाय किनु सोया हुआ मनुष्यभव दुर्लभ है।

नौवाँ दुग का दृष्टान्त ।

एक समुद्रमें दुग्का द्वाटा जाय और पश्चिम समुद्रमें
 माराग इला जाय, यह दुग्क छिद्रमें समीटाका प्रकाश जेमा
 दुर्लभ है जेसागी मनुष्यभव दुर्लभ है। यदि कदाचिन् प्रचण्ड
 अदुग्का उराम प्रगिन हाकर समीटाका प्रकाश छिद्रमें देव
 दास हा हा किनु मनुष्यभवका पाना अत्रि दुर्लभ है ॥

दशवाँ प्रजापत्या दृष्टान्त ।

एक बड़ा मानव, एक देवन उनका पूर्वकर एक नरि
 रम दाका मर दिगिके छिद्र पर जाकर उस पूर्वको

जोरसे पृथक् मारकर चारों दिशामें उड़ा दिया गया। अतः स्थलमय पुद्गल परमाणुकी बेकप्रित करना जैसा मुद्गल मानो दैवयागसे होभी जाये तो भी मनुष्य पर्याय मित अति मुद्गल है ॥

यह दश दृष्टान्तसे मनुष्य पर्यायकी दुर्लभता बताई अथ विशिष्ट पुष्टि के लिये शास्त्रकार परमात् हैं कि—

(शिखरिणी छन्द)

अपारे ससारे कथमपि समासाद्य नृभर,
न धर्म य कुर्याद्विषयसुखतृष्णातरलित ।
दृढन् पारावारे प्रथरमपहाय प्रयदण,
स मुख्यो मूर्खाणामुपलमुपलब्धु प्रयतत ॥१॥

अर्थ— यह नहीं पार पाया जाय केमा ससारम कालसे मनुष्यभय प्राप्त कर जो मनुष्य विषय सुखकी तृ अत्यत आशक्त भया हुआ आत्मचित्तवत जिनेन्द्र पूजा, ब्रह्म, जिनयाणीका अध्ययन स्वाध्याय, संयम, तप, दातादि धर्मको नहीं करता है तो यह धर्मरूप जल्दी तराणेशाला जहा- लकी छाड़कर मूर्ख शिरामणि विषयाशक्तिरूप पत्थरकी गलम लगाकर इस ससाररूप समुद्रमे डुबता है या भ्रमण करता है।

इति मनुष्य भयकी दुर्लभतापर १० दृष्टान्त समाप्त



महा-मंत्र नमस्कार ।

(१) नमो अरिहंताय । नमो सिद्धाय ।
नमो आयुष्याय । नमो उद्योगाय ।

नमो लोके मन्वसाय ।

एषो पञ्च नमुशो सन्धपावप्पणामना ।
मगलाय च सव्यनि पद्म दवद् मंगत्म् ॥१॥

ॐ

(२) मंगल सूत्र

पत्तारि मंगल-अरिहता मंगल । सिद्धा मंगल । साह मंगल
कथली पत्तता धम्मा मंगल ॥१॥

पत्तारि लोके उत्तमा-अरिहता लोके उत्तमा । सिद्धा लोके उत्तमा ।
साह लोके उत्तमा । कथली पत्ततो धम्मालोके उत्तमो ॥२॥

पत्तारिसरणे पयञ्जामि-अरिहता सरणे पयञ्जामि । सिद्धा
सरणे पयञ्जामि । साह सरणे पयञ्जामि । कथली पत्त
त धम्म सरणे पयञ्जामि ॥३॥

(३) पञ्चिदिय-गुरु गुण संख्या सूत्र

पञ्चिदिय सधरणो तद् नर विद्द धमचर गुत्तिधरो ।
वउविद्द कसाय मुक्का इअ अद्धारस गुणेदि सज्जुत्तो ॥१॥

पञ्च महश्चय जुत्ता, पञ्च-विहायार पालण समर्थो ।

पञ्च ममिओ तिगुत्ता, उत्तीस गुणो गुरु मज्झ ॥२॥

(४) स्वमासमण-प्रणिपात सूत्र । (पञ्चाग नमस्कार)

स्वमासमणो यदिउ जावणिञ्जाए, निसीदिआए
मन्थपण वदामि ।

(५) सदगुदकी शाता पृच्छा सूत्र ।

इच्छकार, सुदराइ, सुद देयमि । सुख तप, शरीर-निग्राह, ॥
सुख सजम याथा-निवेदाछोजी स्यामी शाता उ जा ॥
भात-पाणिक्का लाभ दनाजी ॥

(उत्तर- जैमा यतमान ।)

(६) अद्भुत्^४ठआ (गुह्य श्रमापना) पुत्र

इच्छाकारेण नदिनद भगवन् । अद्भुत्ठिओमि, अद्भिन्तर दव
मि न, रामउं ? इच्छे, खाममि द्रमिअ जविचि अपत्तिअ
परपत्तिअ भत्ते पाण, विणय वयायच्च, आलाय, सलाय,
उचरासण, समासण अतरमात्ताए उय्रिमात्ताए, ऊक्किदि मज्झ
यिणय-परिहीण, सुहुम धा, यायर या तुम्भ ज्ञाणद, अद न
जाणामि, तस्समिच्छामि दुक्कड ॥१॥

(७) इरिया वदिय-गमनागमन प्रतिष्मण सूत्र ।

इच्छा कारण भदिनद भगवन् इरियावदिय पडिक्कमामि । ॥
इच्छं इच्छामि पडिक्कमिउं ॥१॥ इरियावदियाए, विराहणाए
॥२॥ गमणागमणे ॥३॥ पाणक्कमण वीयक्कमण, हरियक्कमण आना
उत्तिग, पणग-दग-मट्टीमक्कहा मत्ताणा संक्कमण ॥४॥ ज म जोया
विराहिया ॥५॥ पमिदिया, येइदिया, तेइदिजा, चउरिदिया
पचिदिया, ॥६॥ अभिहया, यत्तिया, लनिया, सघाइया मधद्विया
परियात्रिया किलामिया, उद्विया, टाणाआ टाण, सक्कामिया,
जीवियाआ ववराविया तस्स मिच्छामि दुक्कड ॥७॥

(८) तस्म उत्तरी-दोष-प्रतिकार सूत्र ।

तस्म उत्तरीकरणेण, पायच्छित्तकरणेण विसोहीकरणेण,
विसल्लीकरणेण पायाण, वम्माण, निग्घायणटटाए ठामि
वाउत्सग्ग ॥८॥

(९) अन्नस्य ऊनसिपण कायोत्मगेऽदाक्य स्वलना सूत्र ।
 अ नत्थ ऊनसिपण, निमसिपण, खासिपण छीणण जभाइ
 ण्णं, उहुपण, घाय-निमागण, भमलिप-पित्तमुच्छाय ॥१॥
 सुहुमेहि, अङ्ग सचालेहि सुहुमहि ख७ मचालेहि, सुहुमेहि
 दिग्धि सचालेहि ॥२॥ पथमाइपहि, आगारेहि अभग्गो, अघि
 गहिओ हुज्ज म काउस्सग्गा ॥३॥ जाय अरिहताण, भगघताण,
 समुक्कारेण न पारमि ॥४॥ ताव वाय टाणेण, माणेण
 गणण, अप्पाण धामिरामि ॥५॥

(१०) लोगस्म-नामस्तथ सूत्र ।

लोगस्म उज्जाअगरे, धम्मतिथ्ययरं जिणे ।
 अरिहते वित्तइस्म चउचीसपि षवली ॥१॥
 उसभमजिअ चव द मभममभिणदण च सुमर च ।
 पउमप्पह सुपाम जिण च चदप्पह धम्मे ॥२॥
 सुविहि च पुप्फहत, सीअल सिउजंसवासुपूज्ज च ।
 विमलमणत ध जिण धम्म सति च धम्दामि ॥३॥
 कुथु अर चमहि, धदे मुणिसुन्धय नमिजिण च ।
 धदामि रिट्ठनेमि पास तह वद्धमाण थ ॥४॥
 पथ मपअभिथुआ, जिहुय रयमला पहीण जरमरणा ।
 चउचीस पि जिणधरा, तिथ्ययरा म पसीयतु ॥५॥
 कित्तिव वदिय-महिया जेए लोगस्म इत्तमा सिद्धा ।
 आरुग्ग-वाहिलाभ समाहियर-मुत्तम दिवु ॥६॥
 चदेसु निम्मलयरा आइ-चेसु अदिय पयासयरा ।
 सागरधरगंभीरा, सिद्धा सिद्धि मम दिसतु ॥७॥

(११) करमि भते-सामायिक प्र वाशक्यात सूत्र ।

करमि भते । सामायिक, सायउज्ज जोग पच्चवक्खामि । आत्त

नियम, पञ्जुवानामि, वृषिह, तिविहण मणेण, घायाये,
बाअज न करेमि, न कारवेमि, तस्म भत पडिक्रमामि, निदामि,
गरिहामि, अ पाण शमिरामि ॥

(१२) सामाह्य घयजुत्ता-सामायिक परिपूर्ण उन्धान सूत्र ।

सामाह्य घय जुत्ता, जाय मणे दोइ नियम मजुत्तो ।
छि-नइ अमुह कम्म सामाह्य जतिआ वारा ॥१॥
सामाह्यमि उक्कप, ममणो ह्यमायओ हयइ जम्हा ।
एएण कारणण बहुमा सामाह्य कुज्जा ॥२॥
घाया सूत्र

सामायिक विधिसे लिया विधिसे पारा, विधि करते हुए,
अविधिहा, उम मवका मम घयन कायासे मिच्छामि दुक्कड' ॥
दश मनर, दश घयनक, वाग्द कायासे, यह घरी दोयमेसे
कुछ भी दाप लगा हा उम मवका 'मिच्छामि रुक्कड' ॥

(१३) चैत्य-प्रथम सूत्र

चैत्य घ दून करत हुए आदिमे घोलनेका श्लोक ।

मक्कल कुशल घल्लि पुक्करावतमेघा,
दुरिततिमिर-भानु कल्पवृक्षापमान ।
मयजलनिधिपोत, मय सपत्ति हेतु,
मभयतु सतत घ श्रेयसे शान्ति नाथ ! ॥१॥

तुम मूर्तिन निरक्षया मुस नयणा तरसे ।
तुम गुणगणने घोलवा, रसना मुस हरये ॥१॥
काया अति आनन्द मुस, तुम युग पद करसे ।
ता सेयक तार्थायिता, कहां ? कम दव तरसे ॥२॥
मम जाणीने सहिवाप, नेक नजरमी हे जोय ।
ज्ञान विमल प्रभु नजरथी, ते शु जे नवि होय ॥३॥

(१८) पञ्चपरमन्टी नमस्कार सूत्र ।

ममाऽहन् मित्राचार्यापाध्यायसर्वमाधुम्य ॥१॥

(१९) श्री जिनेन्द्र स्तवन ।

मदल समता सुरलतातो नृ ही अनुपम कद रे ।
 तु ही कृपारस कनक कृभो, तु ही जिणद मुणिदरे ।
 प्रभु तुहि तुहि तुहि तुहि, तुहि धरता ध्यानरे- (५ धाल) ॥१॥
 तुझ स्वरूपी जे यथा तण लघु रदार तान रे ।
 प्रभु तुहि तुहि तुहि तुहि धरता ध्यानरे । प्रभु० ॥२॥
 नुही अलगा भय यकी पण, भायिक रदारे नामरे ।
 पार पाम त भयना एह अचरिज ठामरे ॥ प्रभु० ॥३॥
 जन्म पाथन आज भदारा निरविओ तुझ नुररे ।
 भयाभय अनुमादनाजो हुआ आप हजुररे ॥ प्रभु० ॥४॥
 एह मार अभय आतमा असंख्यात प्रवेशरे ।
 न्दारा छ गुण अनन्ता किम कहै ताम नियेपरे ॥ प्रभु० ॥५॥
 एक एक प्रदेश रदारे, गुण अनन्तनो घामरे ।
 तम करता मुझ सहज मिलत, होत ज्ञान प्रकाशरे ॥ प्रभु० ॥६॥
 ध्यान-ध्याता-ध्याय पर, एकी भाय दाय पमरे ।
 तेम करता सेव्य सेवक, भाय हात तल खेमरे ॥ प्रभु० ॥७॥
 शुद्ध मेधा रदारी जे, हात अचल स्वभायरे ।
 ज्ञान विमल सरीद प्रभुता, हात सुजस जमायरे ॥ प्रभु० ॥८॥

(२०) उद्यमग हर-धी पार्श्वनाथजी स्तवन ।

उद्यमगहर पाम पाम, यद्दामि कम्म-घण-मुक्क ।
 विसहर-विस-नि-नास, मगल-कल्लाण-आयास ॥१॥
 रिमहर-फुलिंग-मत क्ठे धारेद् जो सया मणुओ ।
 रम्मगह-राग-मागी, दुट्ठ-जरा जति उद्यमाम ॥२॥

विष्णु इरे मता, तुङ्ग पणामा वि बहुकला हाइ ।
 नर-तिरियसु वि जिथा, पायति न दुक्क-दोगच्च ॥३॥
 तुह सम्मत्ते लङ्गे, धितामणि कप्पायाय यच्चमद्विप ।
 पायति अयिग्घण, जीवा अयरामर टाण ॥४॥
 इअ मयुआ मदायम भत्तिअर निअररेण द्वियपण ।
 ता द्य दिअह वादि, भय भय पास जिणघद ॥५॥

(२१) जय वीयराय—प्रार्थना सूत्र ।

जय वीयराय जगगुरु द्योउ मम तुह पभायओ भयय ।
 मय निअयआ मग्गा-णुमारिआ इट्टफण सिद्धि ॥१॥
 लागयिरुअच्चाआ गुरुजण पूआ परत्थ करण थ ।
 सुहगुरुजागो तय्ययण सेयणा आभवमग्गा ॥२॥
 पारिअजइ अइवि नियाण-यधण वीयराय तुह समप ।
 तह वि मम हुअज संघा, भय भय तुह चलाण ॥३॥
 दुक्कअअआ कम्मअअओ समाहिमरण थवाहिलाओ अ ।
 मपअअउ मह पअ, तुह नाह पणाम करणण ॥४॥
 सर्व मंगल मागह्य मय कन्याण कारणम् ।
 प्रधान सर्व धर्माणा जैन जयति शासनम् ॥५॥

(२२) अरिहत चेइआण—जिन विद्यामे कायोत्सर्ग करण सूत्र ।

अरिहत चेइआण करेमि काउत्सग्ग ॥१॥ यदण यत्तिआप
 वृअण यत्तिआप, मकार यत्तिआप, मग्गाण यत्तिआप, योहिलाम
 त्तिआप तिहयसग्ग यत्तिआप ॥२॥ सदाप मदाप, धिइप,
 धारणाव अणुप्पेहाअे यइदमाणीअे ठामि काउत्सग्ग ॥३॥

(२३) पच कल्याणक स्तुति ।

गर्भ ज-मनि दीक्षाया, कवल निवृत्ती तथा ।
 यस्ये-द्रा महिमा चतु त जिन नोमि, भक्ति ॥१॥

श्री जिनेन्द्र-द्रव्य पूजन विधि ।

प्रथम गला हुआ पवित्र पानीसे स्नानकर शरीरको छुँछुकर, धूपे हुए पवित्र वस्त्र पहनकर, अपने कपालमें तिलकादि करकर पीछे प्रभुजीको मयूर पीछीसे प्रमार्जन कर, जीवजंतु की रक्षा कर, पवामृत (दूध दही, मिथी, पानी, घी) से प्रक्षान करना चाहिये । पीछे अग टूछन तीन करना चाहिये । पाट टूछन घिगरे करकर धूप जगना चाहिये । फिर केंसर चंदनादिसे अग पूजा करनी चाहिये । फिर पुष्प पूजा पीछे बहार आकर स्वस्तिकस अक्षत पूजा मिठाई धरनेसे नैवेद्य पूजा, फल धरनेसे फल पूजा दीपक धरनेसे दीपक पूजादि अष्ट प्रकारकी पूजा की जाती है । मंदिरमें प्रवेशन नि सीधी न कहनी चाहिये निमरते आश्रमही कहनी चाहिये द्रव्य पूजामें निवृत्त होकर भाग्य पूजामें प्रवेश करना चाहिये ।

भाय पूजन विधि

प्रथम चार नवरका सूत्र याचकर जिनेन्द्रकी पवाग नमस्कार कर पीछे सातवाँ आठवाँ नौवाँ सूत्र बोलकर चार नमस्कारका कायोत्सर्ग करना, पीछे दशवाँ सूत्र प्रगट कहना पीछे चौथा सूत्रसे तीन बार पचाग नमस्कार कर चैत्य घटन करना सा १३-१४-१५-१६-१७-१८-१९-२०-२१-२२ और नौवाँ सूत्र बोलकर एक नमस्कारका काउत्सर्ग करना पीछे पारकर प्रगट २३ वा स्तुति सूत्र कहना । फिर पचाग नमस्कार चौथा सूत्रसे करना ॥ समाप्त ॥

नोट-यह सूत्र सब कटस्थ करलेना चाहिये । प्रभुजी सामने स्तुति करते समय पुरुष वर्ग दाहिनी ओर स्त्री वर्ग बाही ओर खड़े रहकर स्तुति करनी चाहिये ।

॥ श्री जिनमौअग पूजा करते समय बोलनेका दुहा ॥

जल भरी सपुत्र पत्रमें, युगलिक नर पूज त ।

प्रथम चरण अंगुष्ठमें दायक भवजल अगत ॥१॥

(प्रभुके दाहिना और बाया अंगुठ पर तिलक करना)

जानु घले काउस्मग रक्षा, विचर दश विदेश ।

सदा सदा कयल लक्ष्म, पुजो जानु जिनेश ॥२॥

(प्रभुके दोनों होंचणमें तिलक करना ।)

लाक्षातिक वचन करी, यरस्या यरसी दान ।

करकाड प्रभु पूजता पूजो भयो बहुमान ॥३॥

(प्रभुके दोनों काड पर तिलक करना ।)

मान गयु दाय अशथी दग्धी धीर्य अनंत ।

भुजा घले भय जल तथा पूजा सध महंत ॥४॥

(प्रभुके दोनों खभेपर तिलक करना ।)

मिद्ध शिला गुण उजली, लाकान्त भगवन्त ।

वमिया तिणे कारण भवि शिरशिरा पूजंत ॥५॥

(प्रभुके शिखा स्थानमें तिलक करना ।)

तीर्थकर पद पुण्यथी त्रिभुवन जन सेवत ।

त्रिभुवन तिलक समा प्रभु भाल तिलक जयवत ॥६॥

(प्रभुके कपालमें तिलक करना ।)

सोत्र पढार प्रभु देशना, कठ विचर वर्तुल ।

मधुर ध्यान सुरनर सुणे, तिण गले तिलक अमूल ॥७॥

(प्रभुकीय कठमें तिलक करना ।)

हृदय कमल उपशम घले घाल्या राग ने रोप ।

हिम दहे घन गहन, हृदय तिलक मताप ॥८॥

(प्रभुकीय हृदयमें तिलक करना ।)

। रत्नधयी गुण उजली, सकल सुगुण विभ्राम ।
 नाभि कमलनी पुजना, करता अविचल धाम ॥९॥
 (प्रभुजीक नाभिमें तिलक करना)
 उपदेशक नय तत्त्वना, तिण नय अग जिणद ।
 पूजा यहू निध भायधी कहे शुभधीर मुणिद ॥१०॥

श्री आट प्रकारकी पूजाक दाहा ।

(१) जल पूजा ।

जल पूजा जुगत करा, मल अनादि विनाश ।
 जल पूजा फल मुक्ष हाजा मागु एम प्रभु पाम ॥११॥

(२) चदन पूजा ।

शीतल गुण जेहमा रछो शीतल प्रभु मुख रंग ।
 आत्म शीतल करवा भणी पूजा अग्निहा अग ॥१२॥

(३) पुष्प पूजा ।

सुरभि अखड कुसुम प्रही, पूजो गत सताप ।
 सुम जतु भयज परे, करी ए समकित छाप ॥१३॥

(४) धूप पूजा ।

ध्यान-घटा प्रगटावीए घाम नयन जिन धूप ।
 मिच्छत दुर्गध दूरे टल, प्रगटे आत्म स्वरूप ॥१४॥

(५) दीप पूजा ।

द्रव्य दीप सुविचकधी, करता दु ख दाय फाक ।
 भाय-प्रदीप प्रगट हुवे, भासित लोकालाक ॥१५॥

(६) अक्षत पूजा ।

शुद्ध अखड अक्षत प्रही नद्वयर्त्त विशाल ।
 पुरी प्रभु सम्मुख रडो, टाला सकल जजाल ॥१६॥

(७) नैवेद्य पूजा ।

अणाहारी पद में बर्षा विग्रह गृह्य अन्तत ।
दूर करी त दीर्घीय अणाहारी शिष्यमत ॥७॥

(८) फल पूजा ।

इन्द्रादिक पूजा भणी फल लाय धरी राग ।

'पुरुपासम पूजा करी माग शिव फल *म्याग ॥८३

धी सुगृह चन्दन विधि ।

प्रथम गुरुजीकी देवते ही दोशो हाथ जोड़ कर 'मन्थपण
कदामि कहना । पीठ चौथा सूत्र बोलत ही दा बसत पचाग
नमस्कार करना, पीठ छठे सठे पाचवाँ सूत्रका उच्चारण करना
पीठ 'पचाग नमाकर छठ्ठा सूत्रका पाठ बालना फिर चौथा
सूत्र बालकर पचाग नमस्कार करके प्रन्याप्यान करना हाथ
तो करना ॥

सामायिक विधि ।

१ शुद्ध यस्त्र २ आसन ३ मुद्रपत्ति, ४ रत्नोहरण
(चरबला) ५ सापडा (ठपणी) ६ पुस्तक ७ मदी ८ माला
पह सामायिक योग्य उपकरण हैं ।

प्रथम शुद्ध यस्त्र पहनकर ऊच आसन पर पुस्तककी
स्थापना करनी स्थापना करते समय दक्षिण हस्तस आह्वान
मुदास पहला और तीसरा सूत्र पढ़कर स्थापना स्थापनी ।
पीठ चौथा सूत्र पढ़कर पचाग नमाकर सातवाँ इरियावद्धि
सूत्र तथा ८ वा नौथा सूत्र कहकर चार नमस्कार मंत्रवां पाठ
ससग करना । अथवा द्वावाँ सूत्र 'चदेसुतिमलयरा' तक
चितवन करना फिर प्रग 'नमो, अरि हताण' कहकर
दशवाँ सूत्र पढ़ना । अब चौथा सूत्रस पंचाग नमाकर

*मोहदशावा

कारण मदिमह भगवन् । सामायिक मुहपति पडिलेहु ।
 इच्छ " कहकर मुहपति पडि लखनी । पीछे फिर भीया
 सूत्र बोलकर एवाग नमाकर ' इच्छाकारण मदिमह भगवन् ।
 सामायिक मदिमाहु ? ' 'गु० क० मदिमह । ' इच्छ ' फिर ४
 सूत्र प्ययन् कहकर इच्छाकारेण मदिमह भगवन् । सामायिक
 टाऊ ? गु० क० टाआ । ' इच्छ " कहकर दा हाथ जाडकर
 नमस्कार भद्र १ गीनता, पीछे ' इच्छाकारी भगवन् पसायकरी
 सामायिक ददक उच्चारणाजी " फिर घडे या गुरु हाथ ता
 करेमि भत पाठ पढ न दाता अपन स्थय ११ सूत्र पढता ।
 पीछे पूर्वधन् समाप्तमण सूत्र कहकर इच्छाकारेण संदिसह
 भगवन् । वेसणे सदिसाहु ? गु० क० संदिसह । इच्छ
 ख० ' इच्छाकारेण मदिमह भगवन् ! वेसण टाऊँ ? ' गुरु कथन
 टाओ ' इच्छ ' ख० इच्छाकारेण मदिमह भगवन् । सज्जाय
 संदिमाहु ? ' गुरु कथन मदिमह ' इच्छ ' ख० इच्छाकारेण
 मदिमह भगवन् । सज्जाय कहँ ' गु० क० करो ' इच्छ ' पीछे तीन
 याग हाथ जोड कर नमस्कार भद्र गीने । पीछे ध्यान व माला गीने
 या गुस्तक पढ व पढाय एकचित्तस व्याध्याय करे । दो घडी ४८
 मिनिट तक सामायिकमें स्थित रहै ॥

सामायि पारनेकी विधि ।

प्रथम ४ ख० सूत्र कहकर पीछे मातर्वा आठवां नौवा आदि
 सूत्र कहकर पूर्वधन् दशवां सूत्र तककी क्रिया करे पीछे ख०
 ' इच्छाकारण मदिमह भगवन् । मुहपति पडि लेहु ? ' गु०
 कथन पडिलेहु ' इच्छ पीछे मुहपति पडिलनी । फिर ख०
 दकर ' इच्छाकारण मदिमह भगवन् सामायिक पाहँ ' गु० क०
 पुनरपि कतव्य ' अथवा ' पुनो वि कायस्थ शि० क० यथा
 शान्ति । पीछे ख० ' इच्छाकारेण मदिमह भगवन् । सामायिक
 पायु ? गु० क० ' आचारो ण मोत्तम्यो । ' अथवा ' आचारो न
 नात् - जहाँ जहाँ इच्छ ' पढ अथ यहाँ गुरुजीक आदेशकी
 प्रतीक्षा करनी चाहिये ।

मातृग्या । 'शि०' 'व०' महति पंडिते आसन पर अपना द्धिण
 इत्य स्थापकर नमस्कार भत्र तथा शगृहर्षा सुत्र सपूर्ण घोळना
 गद मिद्धा पत्ता रत्रस्रर नमस्कार प्रथम (घोळकर) स्थापना
 उगळ्नी । इत विधि सामायिक कसनयाग प्रायश्चादि कर्मकी
 निर्गारा और पुण्यक भागी गते हैं । प्रायक सामायिकमें रहता
 हुआ धमण तुल्य गीमा ग्या है ।

श्वताम्बर आम्नाय अनुमाः ग्यारें प्रायककी प्रतिमाका सगित धनना

१ दशम प्र० २ व्रत प्र० ३ सामायिक प्र० ४ पौषधापदाम
 प्र० ५ देश मद्यधर्म प्र० ६ मद्यधर्म प्र० ७ सवित्त ग्याग
 प्र० ८ आरभ ग्याग प्र० ९ अनुमति ग्याग प्र० १० जितना ज्ञान
 इतना कहे याकीका कहनका ग्याग प्र० ११ धमण भूत प्र० ॥

१ दशम प्रतिमा धारक प्रायकका नौ मथमें अद्धा हानी चाहिये ।
 छ प्रख्याका गुणपर्यायक ज्ञाता हा । हय-ग्याग्य, होय-ज्ञानने
 योग्य उपाद्य-आचरण योग्य भाशीर मतत रमण करता रह ।
 मम मथग निर्धद अनुकम्पा आस्तिवतादि गुणाक धारक
 हो । अर्हत पूजा गुरु सेवा, ग्याग्याय, दानादिक करनेमें रक
 हा । इतने गुण सहित प्रायक एक दिनकी अथवा एक महिनेकी
 याता उत्कृष्ट जीवत पर्यत प्रतिमा धारण कर सकता है ।

व्रत प्र०-पांच अणुव्रत-अहिमा मर्य, अबीगी स्वस्ती-मतोष
 परिमद-परिमाण ॥ तीन गुण व्रत दिग् परिमाण, भागापभाग
 वस्तुका परिमाण, अनर्थ दृढता ग्याग ॥ अतिथि सविभाग
 यह नौ व्रतकी धारण करता हुआ प्रथम क गुण सहित प्रायक
 दो दिन अथवा दो महिना या तो उत्कृष्ट जीवत पर्यत
 धारण करता रह सकता है ॥

- ३ सामायिक प्र० त्रिकाल या ता एक घण्टा दो घण्टीकी सामायिक दिनमें नित्य करे शेष उपरोक्त तीन दिन या तीन महिना या ता उ० जोगत पर्यंत आराधे ॥
- ४ पौषधोषवास प्र० चाण आहारका त्याग करे उपवास करे। अथवा गरम जलकी छूट रक्खकर उपवास करे, अथवा आर्यवीर वा एकामना करकर भी चार दिन व चार महिना या ता यावत्तीघ पर्यंत उपरोक्त गुण सहित चौथी प्रतिभाको आराधे।
- ५ देश ब्रह्मचर्य प्र०-दिनमें मैथुन न सेवे, रात्रिमें मैथुनका परिमाण करे स्नानका त्याग करे, कौपीन न लगाव वच्छ न लगाय पाव दिन व पाव महिना याती यावत् उपासक गु० ॥
- ६ ब्रह्मचर्य प्र० तीन याग और एक करणसे ब्रह्मचर्य पाले। छ दिन० छ महिना व यावत्ती० शेष उपरोक्त गुणका धारक हा ॥
- ७ सच्चिन्म त्याग प्र० याने पीनमें सजीव वस्तु न ल वापरनेमें यतनास वापर मात दिन व सात महिना या ती यावत्तीघ शेष उपरोक्त ॥
- ८ स्वयं आरभ त्याग प्र० सावध आरभ स्वयं न करे पूजन आदि शुभ कार्यमें यतनासे करे। आठ दिन व आठ महिना यावत् शेष उपरोक्त ॥
- ९ अनुमति त्याग प्र० सत्कारक कोईभी कार्यमें अनुमति न देवा का परमाणु नो दिन, नो महिना, या यावत्ती० शेष उपरोक्त ॥

- १० प्रभोत्तर शिष्याय सद्यः व्यापार त्याग प्र० काल मान दश दिन य दश महिना याता यात्रङ्गी० शय उपरोक्त विशय पन शिर मुहन कराथ य शिखाका पत्रत रख ॥
- ११ धयणभूत प्र० मुहन कराकर अधथा लोच कराकर धमणक उपकरण धारण कर अधथा साध्याचार योग्य विभूपा रखकर घरका त्याग करे । आहार दो का त्याग, अष्ट प्रवचन माताका पालन करे, करण मित्तरी धरणमित्तरी आदि गुणाक आचरणका अभ्यास करे वाह पूछे तो मैं धमणोपाक पेसा कटे य ग्यारधी प्रतिमाधारी हूँ ॥

नाट- जघम्य आराधकको ६६ दिन लगे तार आराधना करनी चाहिये । मध्यम आराधकको ६६ महिने लगे तार आराधना करनी चाहिये । उमृष्ट आराधकका यात्रङ्गीय पर्यंत अतिम प्रतिमाकी आराधना करता हुआ अंतमें सलेखना करे । ममाधि मरणसे देह त्याग ॥

- १ पहली प्रतिमासे लेकर अपनी शुक्ति अनुमार जितनी प्रतिमा धारण कर उतनी जीवन्त पर्यंत पालन कर सकना है । जघम्य मध्यम प्रतिमाधारी योश्रम त्याग द तो उमीका फिरसे-पहेलेसे आरंभ करना चाहिये ॥
- २ यह प्रतिमाधारा मार्गानुसारी गुणाक भी धारक होना चाहिये ।
- ३ गुरु आशा तथा पढावश्यादिक करनी भी करता हुआ मुनि हानेकी उत्कटा रखे ॥
- ४ प्रतिमाधारक धायकने पहेलेदि मधु, (मध) मास मदिराका तथा अभयय वस्तुआक त्याग करना ही ठीक है । सातवी प्रतिमाम व द मूलका अवश्य त्याग करना चाहिये, पहेलेसे ही त्याग होय तो बहुत सुंदर यात है ॥

५ इस विधिकी प्रवृत्ति प्राय आज नहीं है किन्तु जाननेके लिये लिखि है आराधना करने योग्य है निषेध नहीं है। विधानकी विशेषता गुरुदेयसे जाना ॥

यह विधि शास्त्र अथलोकनसे लिखि गए है क्षति होवे तो मेरी है सज्जन महाशय सुधारकर पढे और आराधे ॥

ॐ शान्ति ३

॥ दूसरा प्रकार ॥

भायक योग्य ग्यारे प्रतिमाका वर्णन

ग्यारे प्रतिमाक नाम तथा मक्षित शब्दार्थकी स्पष्टता

१ दर्शन प्रतिमा य समकित प्रतिमा । २ व्रत प्रतिमा ।
३ सामायिक प्रतिमा । ४ पौषध प्रतिमा । ५ कायात्सर्ग प्रतिमा ।
[अभिग्रह विशेष रूप] ६ मैथुन त्याग प्रतिमा । ७ सवित
त्याग प्रतिमा । ८ स्वय आरभ ग्याग प्रतिमा । ९ आदेशाऽऽरभ
त्याग प्रतिमा । १० अपने लिये बनाया गया भोजन आदि त्याग
प्रतिमा । ११ भ्रमण भूत-मुनि समान प्रतिमा ॥

प्रतिमा शब्दका शब्दार्थ यह है कि अभिग्रह या नियम विशेष जानना ॥

अथ अनुक्रमसे सबही प्रतिमाका विस्तारसे वर्णन किया जायगा ॥ उक्त प्रतिमाओंके काल प्रमाण प्रतिमाओंकी सख्याके साथ मदिनाओंका है, जेसा कि पहलीका एक मास दूसरीका दो मास आदि ॥

१ दर्शन प्रतिमा-सम सवेग-निर्धेद अनुकम्पा और आस्तिकता गुण युक्त तथा कदाग्रह और धीतरागके उपदेशमें शकादि

दाप रहित और दाप रहित समकितकों यथा शक्ति यथा स्थित एक मास पालनेमें आवे उस प्रथम दशन प्रतिमा कही जाती है ।

- २ व्रत प्रतिमा-भावक योग्य ५ अणुव्रत ३ गुण व्रत ४ शिक्षा व्रत यह चार व्रत निरतिचारसे उपरोक्त दशन प्रतिमाके गुण सहित द्वा मास तक धारण कीई जाती है ॥
- ३ सामायिक प्रतिमा-मन-वाणी-कायाके पाप व्यापारोंकी राककर और दोष रहित धर्मध्यान रूप व्यापारमें स्थिर हो कर मास और नामकी दो दूफे तीन मास पर्यंत सामायिक उपरोक्त गुणसहित करनी सामायिक प्रतिमा है ।
- ४ पौषध प्रतिमा-उपगत गुण सहित हरबेक अष्टमी चतु दशी प्रमुख पर्वदिनोंमें सर्वथा चार आहारक त्याग, शरीर सकारका त्याग पाप व्यापारका त्याग मैथुनका त्याग ऐसे निर्दाय पौषध चार मास पर्यंत करना सो ॥
- ५ कायोत्सर्ग प्रतिमा-उपगत गुण सहित पौषधोपवास करकर सममानमें व शृंग्यागर्गमें व काई भय स्थानमें निभय घनकर काया मर्ग मुद्रामें ध्यानस्थ रात्रिमें पाच मास पर्यंत रह ना ॥
- ६ ब्रह्मचर्य प्रतिमा-सणगार कथा स्नान घिलेपन, प्रमुख विभूषाको त्यागता और स्त्री कथा व स्त्रीक साथ वकातमें राग सहित बातचीत करनेका त्याग छ मास पर्यंत ब्रह्मचर्य सो ॥
- ७ सचित्त त्याग प्रतिमा सजीव भोजन पानी आदिका सात मास पर्यंत त्यागना आर उपर उपरकी प्रतिमाकी भी

इस विधिकी प्रवृत्ति प्रायः आज नहीं है किन्तु जाननेके लिये लिखि है आराधना करने योग्य है निषेध नहीं है। विधानकी विशेषता गुरुदेवसे जाना ॥

यह विधि शास्त्र अधलोकनसे लिखि गई है क्षति होवे तो मेरी है सवजन महाशय सुधाकर पढ़ें और आराध ॥

ॐ शान्ति ३

॥ दूमरा प्रकार ॥

आयक योग्य ग्यारे प्रतिमाका वर्णन

ग्यारे प्रतिमाक नाम तथा सक्षित शब्दार्थकी स्पष्टता

१ दर्शन प्रतिमा व समकित प्रतिमा । २ व्रत प्रतिमा ।
३ सामायिक प्रतिमा । ४ पौषध प्रतिमा । ५ कायोत्सर्ग प्रतिमा ।
[अभिग्रह विशेष रूप] ६ मैथुन त्याग प्रतिमा । ७ सचित त्याग प्रतिमा । ८ स्वयं आरभ ग्याग प्रतिमा । ९ आदेशाऽऽरभ त्याग प्रतिमा । १० अपने लिये बनाया गया भोजन आदि त्याग प्रतिमा । ११ धमण भूत-मुनि समान प्रतिमा ॥

प्रतिमा शब्दका शब्दार्थ यह है कि अभिग्रह या नियम विशेष जानना ॥

अथ अनुक्रमसे सवही प्रतिमाका विस्तारसे वर्णन किया जायगा ॥ उक्त प्रतिमाओंके काळ प्रमाण प्रतिमाओंकी सख्याके साथ महिमाओंका है, जैसा कि पहलीका एक मास दूमरीका द्वा मास आदि ॥

१ दर्शन प्रतिमा-सम सवेग-निर्बेद अनुकम्पा और आस्तिकता गुण युक्त तथा वदाग्रह और धीतरागके उपदेशमें शकादि

दाय रहित और दाय रहित समकित्तकी यथा शक्ति यथा स्थित एक मास पाण्डनेमें आवे उस प्रथम दशम प्रतिमा बढी जाती है ।

- २ व्रत प्रतिमा-भाष्य योग्य ५ अणुव्रत ३ गुण व्रत ४ शिक्षा व्रत यह चार व्रत निरतिचारमे उपरान्त दशम प्रतिमाके गुण सहित द्वा मास तक धारण कीई जाती है ॥
- ३ सामायिक प्रतिमा-मन-वाणी-वायार पाप व्यापारकी रोककर और दाय रहित धर्मव्याग रूप व्यापारमें स्थिर हो कर प्रात और मामको दो रूपे तीन मास पर्यंत सामायिक उपरोक्त गुण सहित करनी सामायिक प्रतिमा है ।
- ४ पौषध प्रतिमा-उपरान्त गुण सहित हरभक अष्टमी घतु दशी प्रमुख पर्वदिनोंमें सबधा चार आहारक त्याग, शरीर सम्भारका त्याग पाप व्यापारका त्याग मैथुनका त्याग ऐसे निर्दाय पौषध चार मास पर्यंत करना सो ॥
- ५ कायोत्सर्ग प्रतिमा-उपरान्त गुण सहित पौषधापवात करकर सममानमें थ नृत्यागाममें थ काई भय कथानमें निर्भय बनकर कायात्सर्ग मुद्रामें ध्यानस्थ रात्रिमें पाँच मास पर्यंत रह ना ॥
- ६ ब्रह्मचर्य प्रतिमा-सणमार कथा, स्नात विलेपन, प्रमुख विभूषाका त्यागता और स्त्री कथा थ स्त्रीक सान वद्वानमें राग सहित घातघीत करनका त्याग छ मास पर्यंत ब्रह्मचर्य सा ॥
- ७ सचित्त त्याग प्रतिमा नजीक भोजन पानी आदिका मास मास पर्यंत त्यागता आर उपर उपरकी प्रतिमाका भी पाठना सो ॥

- ८ स्वयं आरंभ त्याग प्रतिमा-उपरोक्त गुण सहित आठ मास पर्यंत अपने आरंभ समाप्त नहीं करना सा ॥
- ९ अन्यसे-दूसरेसे आरंभ त्याग प्रतिमा-उपरोक्त गुण सहित नौ मास पर्यंत दूसरेसे भी आरंभ समाप्त कराने का त्याग सो ॥
- १० स्व निमित्त आहारादि त्याग प्रतिमा-उपरोक्त गुण सहित दश मास पर्यंत अपने त्रिये यत्नाये कये आहार पानीका त्याग करे और शिवा रक्खकर मुडन कराये व सवथा मुडन कराये सा ॥
- ११ धमणभूत प्रतिमा-उपरोक्त गुण सहित मुडन कराकर वा फेस लुच कर रजाहरण तथा पात्रादि मुक्ति त्रिग धारण कर दोष रहित आहार पानी ग्रहण करता हुआ जग जग विचरे कोइ प्रश्न करे तो कहे कि मैं धमणोपालक ग्यारवी प्रतिमाधारी हूँ यह प्रतिमाग्यारा मास वजीवन पर्यंत रखे सो ॥

॥ मतांतर ॥

आवश्यक शूर्णीकारने २ प्र० रात्रिभाजन त्याग यताइ हैं तथा ६ प्र० सचित त्यागरूप है। ७ प्र० दिवसकी मद्यवाप पालना और रात्रिका नियम कहा है। ८ प्र० सवथा मद्यवर्य पालन है। ९ प्र० प्रेथ्य आरंभ त्याग है बाकी पूर्ववत् ॥

नोट — प्रतिमाका पालन करना आवश्यक है। कमजोर बनना सो कायरता है। जरूर दाप टांने मुश्कल है ता भी कुछ मास करेंग ॥



श्री जैन दिगम्बर और ऋषताम्यर शास्त्रिका
' सारिख भाषवाले कुछ
पद्य और गद्य

' तव पादौ मम हृदये मम हृदय तव पदद्वय लीन ।
निष्ठतु जिनम्भ्र ! तावयाश्रमिर्वाण संघति ॥ दि०

।य- हे 'जिनम्भ्र द्य' आपक पवित्र चरण कमल जब तक मुझ
लोकी प्राप्ति न हो तब तक मेरे हृदय मन्दिरमें विराजमान
हो और मग हृदय आपक चरणकमलामें लीन रहे ।

त्याग विरह, खाभा, गुरुजनपूजा पररथ करण थ ।
सुदगुरु जागा तष्वयण, सेवणा अभयमग्न द्वा ॥ श्वे० ॥

।र्थ-हे जिनम्भ्र ! जब तक मैं यह सत्कारमें हू तब तक मुझ
आक। विरह प्रवृत्तिका त्याग हा और गुरुजनाकी विनय पूजा
करता रहूँ तथा परोपकार करता रहूँ और सद्गुरुओंका सजाग
मीलता रहे, तथा भय स्थिति पयम्त अन्व हूँ आपक प्रवचनकी
सेवना करूँ ।

' धारिज्जह् जह्धि निपाण-गधण धीयराय तुह समप ।
तहधि मम हुज्ज संवा, भय भय तुम्ह चल्पाण ॥ श्वे०

अर्थ-हे धीतरागदय ! आपका प्रवचनमें यद्यपि निदान करनेकी
मनाई है तथापि भयामयमें आपक चरण कमलकी सेवा मुझ
प्राप्त हो ॥

दुखख कखड कम्म कखड, धाहिलाहा सुगह् गमण ।
सम्म समाहि मरण, जिणगुणसेपनि हाउ मज्झ ॥ दिग्० ॥

अर्थ-हे भगवन! मेरे दुःखोंके नाश हो कर्मोंके नाश हो, रत्न त्रयीकी प्राप्ति हो, सुगतिमें गमन हो, सम्यग् दर्शनकी प्राप्ति हो, समाधि मग्न हो और श्री जितराजके गुणोंकी प्राप्ति हो ऐसी मेरी भावना है ।

‘ दुःखं कर्मश्री कर्मकलशो समाधिभरणं च धोदिलामो अ ।
सपञ्जळ मह पत्र, तुह नाह पणाम करणेण ॥ श्वे ॥

अर्थ- हे नाथ! आपका प्रणाम करनेसे मेरा दुःखका नाश हो, कर्मोंके नाश हो, और समाधि पूर्वक भरण होतया रत्न त्रयीकी प्राप्ति हो

‘ स्वप्नामि मन्थजीवाण सखे जीवा स्वप्नतु मे ।
मिच्छो म सख भूदेषु घैर मज्झ ण कणवि ॥ दि० ॥

अर्थ- मैं समस्त जीवों पर क्षमा करता हूँ । और मुझे भी सर्व जीव क्षमा दे । मेरी समस्त जीव भावमें मैत्री है । मेरे क्रिमोंके साथ घैर नहीं है ।

स्वप्नामि सख-जीव, मन्थे जीवा स्वप्नतु मे ।
मिच्छो मे सख भूदेषु घैर मज्झ न कणवि ॥ श्वे० ॥

अर्थ - एक ही है ॥

दिग्भ्यर आयक दिग्भ्यर मुनिजीकी नम्रधा भक्ति
नीचे लिखे मुजब कर तेहें ।

१ प्रतिग्रह-अत्र तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ कहकर बड़े रखे । २ ऊँके स्थान पर खड़े रखे । ३ पैर प्रभालन करे । ४ पुजा करे । ५ नमस्कार करे । ६ ७-८ मन ध्यान कायाकी शुद्ध रखे । ९ भोजन दोष रहित शुद्ध करावे ॥

दानात् शुभ ।

१ दान देनेकी प्रथा होनी चाहिये । २ दान मुनिराज पर अनुराग दाना चाहिये । ३ दान आना चाहिये । ४ दान देने योग्य पदार्थकी शुद्धि होनी चाहिये । ५ दानादात्री फलकी इच्छा नहीं रखनी चाहिये । ६ दान अशोधी हो । ७ शक्तियुक्त हो ॥

अथ श्री भीधर्मजिन स्तुति

नम श्री धर्म निष्कर्मद्विषाय महितायते ।
 मर्त्यामरेन्द्रनागश्रैद्विषायमहितायते ॥१॥
 जीयाञ्जिमौषो ध्यायताम् ततान लसमानया ।
 मामण्डलद्विषया य स ततानलसमानया ॥२॥
 भारति प्राग्जिनेग्रणां नवनो रक्षतारिक ।
 सेसाराभो निधायस्मात्तपनो रक्षतारिक ॥३॥
 षक्तिस्था य विद्याच्छक्तिकरा ह्यमानवाचिता ।
 यशस्विनूतनाम्भोजकरालाभा त्रयविता ॥४॥

इति श्री धर्म जिनस्तुति ।

अथ श्री धीरद्विष्णुस्तुति

धीर देव नित्यं यन्त्रेण पादा ।
 जिन वाक्य भूयाद्गुरो

शास्त्र-स्वाध्याय का मंगलाचरण

ओंकारं विदुस्युक्त, नित्य ध्यायति योगिन ।
 कामद मोक्षद चैव, ओंकाराय नमो नम ॥१॥
 अपरिलशब्दघनो घ प्रभालितसकलभूतलमकलङ्का ।
 मुनिभिदपासिततीर्था, सरस्यती हरतु नो दुरितान् ॥२॥
 अज्ञानतिमिराम्भाना ज्ञानाङ्गनशालाकया ।
 चक्षुरन्मीलित येन तस्मै श्रीगुरवे नम ॥३॥

॥ श्री परमगुरवे नमः, परम्पराचार्यगुरवे नमः ॥

सकलफलपविष्यसक, श्रेयसा परिशुद्धक धर्ममभ्य-धक,
 भव्य-जीवमन प्रतियोधकारक, पुण्यप्रकाशक पापप्रणाशकमिदं
 शास्त्र श्री ' ' नामधेय, अस्य मूलः घ यकर्ता
 श्रीसवशदेवास्त-दुत्तरप्रन्धकर्तार श्री-गणधरद्वया प्रतिगणध-
 रदेवान्तेषा यवनानुमारमासाय श्री आचार्येण
 विरचित, धातार सावधानतया ध्रुणध-तु ।

मङ्गल भगवान् घीरो, मङ्गल गौतमी गणी
 मङ्गल A कुम्भु-दार्या, जैनधर्मास्तु मङ्गलम् ॥१॥
 सर्वमङ्गल-भाङ्गक्य सर्वकल्याण-कारकम्
 प्रधान सर्वधर्माणा, जैन जयतु शासनम् ॥२॥

